RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2025-27

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष १० अंक १२ दिसम्बर २०२५ बुद्धजी शाका ३४७ विक्रम सवंत् २०८२ पृष्ठ संख्या ३२

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र)

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ की स्थापना वर्ष 2005 में सरसावा, जिला सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) में श्री राजन स्वामी जी द्वारा की गई थी। इसका प्रमुख उद्देश्य ज्ञान, शिक्षा, उच्च आदर्श, पावन चरित्र व भारतीय संस्कृति का समाज में प्रचार करना तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित आध्यात्मिक मूल्यों द्वारा मानव को महामानव बनाना है। इसके साथ ही यह संस्था श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक वाणी का प्रकाश फैलाकर सम्पूर्ण विश्व को एक सच्चिदानंद परब्रह्म के प्रेममयी आंगन में भाव-विभोर करने के लिए कृत संकल्पित है। इसके लिए उच्च माध्यमिक शिक्षा प्रदान कर ऐसे विद्वानों को तैयार किया जा रहा है जो संसार को धर्म के वास्तविक स्वरूप का बोध करा सकें और सच्चिदानंद परब्रह्म के साक्षत्कार का यर्थाथ मार्ग दर्शा सकें।

ज्ञानपीठ में उपलब्ध सुविधाओं में मुख्यतः शिक्षा कक्ष, पुस्तकालय व वाचनालय, ध्यान कक्ष, प्रवचन कक्ष, कम्प्यूटर कक्ष, दृश्य-श्रव्य स्टूडियो, छात्रावास, भोजनालय, मुद्रणालय, गौशाला इत्यादि सम्मिलित है।

कालान्तर में ज्ञानपीठ की पन्ना (मध्य प्रदेश), बड़ोदरा (गुजरात), दाहोद (गुजरात), सिक्किम तथा तालावाड़ि (तमिलनाडु) में शाखाएं श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र के नाम से स्थापित की गई हैं जो समाज में ब्रह्मज्ञान का आध्यत्मिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने में निरन्तर कार्य कर रही हैं।

: सम्पर्क करें :

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर–247232 (उ.प्र.)

E-mail : shriprannathgyanpeeth@gmail.com

Website : www.spjin.org • **WhatsApp:** +91 +91 75338 76060

तारतम मंजरी

वर्ष 10 • अंक 12 • दिसम्बर 2025 • बुद्धजी शाका 347
विक्रम संवत् 2082

प्रेरणा स्रोत
राजन स्वामी

•

मुख्य संपादक
आचार्य सुभाष
9725389547

•

संपादक
कृष्ण कुमार कालड़ा
9414846972

• • •

लेखों में प्रकट किए गए विचार लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं। इनके प्रति प्रकाशक/संपादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र सहारनपुर होगा।

• • •

सदस्यता शुल्क

वार्षिक रु. 200/-
आजीवन (10 वर्ष) रु. 1800/-

इस अंक में

	सम्पादकीय	3
1.	भ्रांतिनाशनम् प्रश्नमाला 5 – राजन स्वामी	4
2.	भौतिक और आध्यात्मिक विधा में अन्तर – आचार्य सुभाष	9
3.	प्रेम अथवा शक्ति? – ममता वर्मा	14
4.	मंदिर या गुरुकुल? – राजदिल	16
5.	माया के विरुद्ध हथियार – लिंकन अग्रवाल	18
6.	पृथ्वी परिक्रमा और परनाधाम – डॉ. मनीषा दुबे	21
7.	परिक्रमा : एक भाव – डॉ. मनीषा दुबे	24
8.	सद्गुरु धर्मवीर जागनीरत्न सरकारश्री – दिलीप	25
9.	रामत आंबा नी – राहुल श्रीमाली	28
10.	उत्तर भारत में जागनी यात्रा	30

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
नकुड़ रोड, सरसावा 247232, जिला सहारनपुर (उ. प्र.)
फोन : +91 70881 20381
ई-मेल : tartammanjari@gmail.com

किरंतन

राग श्री केदारो

सुनो रे सतके बनजारे, एक बात कहूं समझाई ।
या फंद बाजी रची माया की, तामें सब कोई रह्या उरझाई ।।१।।

आंटी आन के फांसी लगाई, वे भी उलटीऐं दई उलटाई ।
बंध पर बंध दिए बिध बिध के, सो खोली किनहूं न जाई ।।२।।

चौदे भवन लग एही अंधेरी, झूठे को खेल झुठाई ।
प्रगट नास व्यास पुकारे, सुकदेव साख पुराई ।।३।।

लोक लाज मरजादा छोड़ी, तब ग्यान पदवी पाई ।
एक आग ज्यों छोटी बुझाई, त्यों दूजी मोटी लगाई ।।४।।

कोट सेवक करो नाम निकालो, इष्ट चलाओ बड़ाई ।
सेवा कराओ सतगुर केहेलाओ, पर अलख न देवे लखाई ।।५।।

अब छोड़ो रे मान गुमान ग्यान को, एही खाड़ बड़ी भाई ।
एक डारी त्यों दूजी भी डारो, जलाए देओ चतुराई ।।६।।

सास्त्र पुरान भेख पंथ खोजो, इन पैडों में पाइए नाहीं ।
सतगुर न्यारा रहत सकल थें, कोई एक कुली में कांही ।।७।।

सत चाहो सो सब्दा चीन्हो, सो आप न देवे देखाई ।
जिन पाया तिन माहें समाया, राखत जोर छिपाई ।।८।।

सुध सबे पाइए सब्दों से, जो होवे मूल सगाई ।
खिन एक बिलम न कीजे तब तो, लीजे जीव जगाई ।।९।।

पर मनुआ दिए बिन हाथ न आवे, सत की बड़ी ठकुराई ।
और उपाय याको कोई नाहीं, जिन देवे आप बड़ाई ।।१०।।

महामत कहें सावचेत होइयो, मिल्या है अंकुरों आई ।
झूठी छूटे साँची पाइए, सतगुर लीजे रिझाई ।।११।।

(प्रकरण ५)

सम्पादकीय

धन की गति

धन के उपयोग के सम्बन्ध में भर्तहरि का एक नीति वाक्य है-

दानं भोगो नाशस्तिस्त्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्तेतस्य तृतीया गतिर्भवति।।

अर्थात् धन की तीन गति होती हैं - दान, भोग और नाश। लेकिन जो न तो धन को दान में देता है और न ही उस धन का भोग करता है, उसके धन की तीसरी गति निश्चित है। प्रायः इसी कथन के आधार पर दान की सार्थकता सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है और धार्मिक संस्थाएं बड़ी राशि एकत्र कर लेती हैं। लेकिन तारतम वाणी के 'किरंतन' ग्रंथ में निम्न दो चौपाइयां आती हैं-

गोविन्द के गुन गाए के, तापर मांगत दान।
धिक धिक पड़ो ते मानवी, जो बेचत हैं भगवान।।(२६/४)

अर्थात् लोग भगवान के गुण गाकर दान की मांग करते हैं। ऐसे लोगों को धिक्कार है जो भगवान का नाम बेचकर व्यक्तिगत स्वार्थ साधते हैं।

उदर कारन बेचें हरी, मूढ़ों एही पायो रोजगार।
मारते मुख ऊपर, वाको ले जासी जम द्वार।।(२६/५)

अर्थात् लोग अपना पेट भरने के लिये भगवान का नाम बेचते हैं। इन बुद्धिहीन लोगों को धन कमाने के लिये यही एक व्यवसाय मिला है। मृत्यु के पश्चात् यमदूत इनके मुख पर डण्डे मारते हुए इन्हें यमराज के पास ले जायेंगे।

यह सत्य है कि धर्म की ओट में धन के दुरुपयोग से बहुत अनर्थ होता है किंतु यह भी सत्य है कि प्रायः सभी धार्मिक संस्थाओं का कार्यभार दान के द्वारा ही चलता है। यहां दान मांगने की निन्दा इसलिए की गयी है कि व्यक्ति उस धन का दुरुपयोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये करता है जो निश्चित ही अनुचित है। मनुष्य को अपने सामर्थ्य से अधिक धन मानवता के कल्याणार्थ दान अवश्य करना चाहिये, तभी धर्म का प्रचार सम्भव है। किंतु जब कोई कथा-चर्चा करके परमात्मा की सेवा या अपनी दक्षिणा के रूप में मांगी राशि का उपयोग समाज हित में न कर पारिवारिक या व्यक्तिगत लाभ के लिये करता है तो यह पाप है।

दान किये हुए धन को सदा समाज की सम्पत्ति मानकर परहित की भावना से उसका सदुपयोग करना चाहिये, तभी उसकी सार्थकता है।

- कृष्ण कुमार कालड़ा

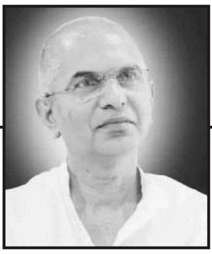

राजन स्वामी, सरसावा

भ्रांतिनाशनम् प्रश्नमाला 5

प्रश्न ७ : क्या आपने खुलासा ग्रन्थ की टीका के पृष्ठ १२७ चौपाई ६ एवं १० में ऐसा लिखा है कि परब्रह्म का वास्तविक ज्ञान हिन्दू वेद शास्त्रों से अलग उच्च कोटि का है जो कुरान में वर्णित है?

उत्तर : आपने खुलासा ग्रन्थ के प्रकरण २ की चौपाई ६ एवं १० का जो उदाहरण दिया है, उसके अर्थ में कहीं भी 'उच्च कोटि' के शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, अपितु सबसे (वेद-कतेब) अलग कहा गया है। वे दोनों चौपाईयां इस प्रकार हैं-

ए जो कागद वेद कतेब के, तामें जरा न हुकम बिन।
दुनिया सब तिन पर खड़ी, ए जो अठारे बरन ।।

कलाम अल्लाह जो फुरमान, सो इन सबसे न्यारा जान।
ल्याया पैगंमर आखिरी, हक के कौल परवान।।

पुराना विधान (ओल्ड टेस्टामेंट) के रुप में जंबूर तथा तौरेत ग्रन्थ आते हैं जो दाऊद एवं मूसा पैगम्बर के द्वारा अवतरित हुए। नया विधान (नयू टेस्टामेंट) को इंजील कहा जाता है जो ईसा मसीह के द्वारा अवतरित हुआ माना जाता है। ईसा मसीह के देह त्याग के पश्चात् लूका, मत्ती, युहन्ना आदि ने उनके विचारों का संकलन किया है। ओल्ड टेस्टामेंट तथा न्यू टेस्टामेंट का सम्मिलित रूप ही बाईबल है जिसे पूर्ण रूप से लिखने में लगभग १५०० वर्षों का समय लगा है।

पुराने विधान को लगभग ३६ तथा नये विधान को लगभग २७ व्यक्तियों ने संकलित किया है। इतना होते हुए भी इनमें परमधाम तथा अक्षरातीत की स्पष्ट पहचान नहीं है। इसी कारण कुरान का अवतरण हुआ जिसमें परमधाम तथा कियामत के समय इमाम महदी के रूप में प्रकट होने वाले परब्रह्म के स्वरूप (प्राणनाथ जी) का वर्णन है। कुरान में तौरेत, इंजील तथा जंबूर के मुख्य विषयों का भी समावेश हो गया जिससे कुरान के समक्ष इन ग्रन्थों की आवश्यकता नहीं रही अर्थात कुरान में वर्णित परमधाम का ज्ञान कतेब पक्ष के तौरेत, इञ्जील तथा जंबूर से भिन्न, श्रेष्ठतर है।

यदि आप यह कहें कि उपरोक्त चौपाई में वेद-कतेब शब्दों का एक साथ प्रयोग होने से यही सिद्ध होता है कि कुरान का ज्ञान वेद से श्रेष्ठ है तो इसका समाधान यह है कि तारतम वाणी में अधिकतर स्थानों पर 'वेद' शब्द का प्रयोग वेदों की व्याख्या में लिखे जाने वाले उपनिषदों, दर्शन शास्त्रों, पुराणों, मनुस्मृति एवं ब्राह्मण आदि धर्म ग्रन्थों के लिये हुआ है।

कहे वेद बैकुंठ से, आए चतुरभुज दिया दिदार।
वसुदेव तिन सिखापन, स्याम पोहोंचाया नन्द द्वार।। खु. १३/३

वेदें कह्या स्याम वृज में, आए नन्द के घर। खु. १३/१४

वेदो कह्या आवसी, बुध ईश्वरों के ईस।
मेट कलजुग असुराई, मुक्तदेसी सबों जगदीस ।। खु. १२/३१

उपरोक्त उद्धरणों में वेद का तात्पर्य चारों वेदों की मूल संहिता भाग से नहीं अपितु शास्त्रों एवं पुराणों से है, क्योंकि श्री कृष्ण जी की व्रज लीला का वर्णन भागवत आदि पुराणों में है, संहिता भाग में नहीं। चारों वेदों को अपौरुषेय कहा गया है अर्थात किसी व्यक्ति विशेष ने चारों वेदों को नहीं कहा है अपितु चार ऋषियों को समाधि अवस्था में यह दिव्य ज्ञान अवतरित हुआ है। प्रत्येक सृष्टि में यह ज्ञान परम्परागत रूप से प्रकट होता है। इस प्रकार वैदिक ज्ञान की गरिमा को कम करने का कोई प्रश्न ही नहीं है क्योंकि यह ज्ञान मनुष्यकृत नहीं है। 'ब्रह्मक्षर समुद्भवम्' गीता ३/१५ का कथन भी यही दर्शाता है कि वेद को अविनाशी ब्रह्म से उत्पन्न हुआ समझना चाहिये।

किन्तु वेद का ज्ञान बीज रुप में है जिसको विस्तृत रूप में दर्शाने का प्रयास ऋषियों ने शास्त्रों में किया है। उनमें विशेषतः योगमाया के ब्रह्माण्ड (चतुष्पाद विभूति, बेहद) का ही वर्णन है। वेदों में स्वलीला अद्वैत परमधाम का सांकेतिक वर्णन है क्योंकि जीव सृष्टि या ईश्वरी सृष्टि परमधाम में प्रवेश करने में असमर्थ है। पूर्णर्णात् पूर्ण होने से परमधाम में किसी भी नवीन चैतन्य (ब्रह्मसृष्टियों से भिन्न) का प्रवेश होना सम्भव नहीं है। अतः किसी अप्राप्य का निरर्थक रुप से विस्तृत वर्णन करना विवेकहीनता ही कही जायेगी। यही कारण है कि सृष्टि में प्राचीनतम्, अपौरुषेय एवं ज्ञान-समुद्र कहे जाने वाले वेदों में परमधाम के साक्षात्कार करने का कोई मार्ग नहीं है।

परमधाम की शोभा एवं लीला का करोड़वां अंश अक्षर ब्रह्म के दूसरे पाद (केवल ब्रह्म) में प्रतिबिम्बित होता है। इसे ही उपनिषदों में 'रसो वै सः' कहकर वर्णित किया गया है। अक्षर ब्रह्म की पंचवासनायें केवल ब्रह्म को ही परमधाम एवं सबलिक धाम को अक्षरधाम मानती हैं। जब भगवान शिव माहेश्वर तन्त्र में भगवती उमा से एवं पुराण संहिता में वेद व्यास जी से परमधाम का वर्णन करने का प्रयास करते हैं तो प्रेम संवाद आदि कुछ वर्णन तो परमधाम का करते हैं किन्तु जब वे शोभा एवं लीला का वर्णन करते हैं तो केवल ब्रह्म का वर्णन कर देते हैं।

शृंगारश्च तथा हासः करुणो रौद्र एव च।
भयानकस्तथा वीरो विभत्सोदभुत् एव च।।

शान्तो भक्तिरिति ख्याता रसा दश मुनीश्वर।
घनीभूत रसाकारं मूल मन्दिरमदभुतम्।। पु. सं. ३३/५५,५६

शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, वीभत्स, भयानक, अद्भुत तथा शान्त एवं भक्ति रस। हे मुनीश्वर! इस प्रकार ये १० रस प्रसिद्ध हैं। अद्भुत् रंगमहल तो रस का ही घनीभूत (जमा हुआ) रूप है। इससे अलग परमधाम में मात्र एकत्व (वहदत) का रस है।

स्वलीला अद्वैत परमधाम में एकत्व (वहदत) है, वहां पर वियोग लीला सम्भव नहीं है। इस प्रकार पुराण संहिता में जिन दस (१०) रसों का वर्णन किया गया है, वह केवल ब्रह्म की ही भूमिका में घटित हो सकता है, परमधाम में नहीं। माणिक पर्वत, पुष्पराग (पुखराज), रंगमहल आदि का वर्णन परमधाम के प्रतिबिम्बित स्वरूप (केवल ब्रह्म में स्थित) का वर्णन है किन्तु मूल मिलावे में होने वाले प्रेम संवाद का वर्णन परमधाम का है।

यह तो सर्वमान्य तथ्य है कि बिम्ब ही प्रतिबिम्ब के रूप में दृष्टिगोचर होता है। भले ही केवल ब्रह्म सम्पूर्ण परमधाम का प्रतिनिधित्व नहीं करता किन्तु पुराण संहिता एवं माहेश्वर तन्त्र में वर्णित शोभा को पढ़ कर परमधाम का भावमय दृश्य तो प्रस्तुत हो ही जाता है। इस प्रकार का सैकड़ों श्लोकों में इतना विस्तृत वर्णन कतेब ग्रन्थों में कहीं भी नहीं है। पुराण संहिता के ३२वें अध्याय तथा माहेश्वर तन्त्र के अध्याय ४२-४६ तक में इस सत्य को सहज ही जाना जा सकता है।

इसके साथ ही चारों वेदों में पुरुष सूक्त आया है जिसमें क्षर पुरुष (आदि नारायण) एवं योगमाया के ब्रह्माण्ड (चतुष्पाद विभूति) का वर्णन है। पुनः यह भी कहा गया है कि इसके परे वह परमधाम है जिसमें परब्रह्म का मूल स्वरूप विराजमान है। कुछ लोग भ्रान्तिवश यह भी कहा करते हैं कि पुराण संहिता एवं माहेश्वर तन्त्र की रचना श्री निजानन्द (प्रणामी) मत के अनुयायियों ने की है जबकि वास्तविकता यह है कि माहेश्वर तन्त्र नारद पांचरात्र ग्रन्थ का अंश है।

इसी प्रकार आर्य समाज के प्रसिद्ध इतिहासकार आचार्य भगवत् दत्त जी ने आर्ष ग्रन्थों की सूची में पुराण संहिता का भी नाम लिखा है। उन्होंने यह भी लिखा है कि प्राचीन काल में तीन विद्वानों द्वारा तीन पुराण संहितायें लिखी गयी थी। इतना अवश्य है कि वर्तमान समय में जो पुराण संहिता उपलब्ध है, वह अधिक प्राचीन नहीं है क्योंकि इसके प्रथम अध्याय में १८ पुराणों की संख्या दर्शायी गयी है। यह तो सर्वविदित है कि १८ पुराणों की रचना महाभारत के पश्चात् भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों ने स्वयं को श्व्यासश की उपाधि धारण कर की है। यही कारण है कि तारतम वाणी में वेद शास्त्रों की प्रशंसा की गयी है और उन्हें परब्रह्म की पहचान कराने वाला कहा गया है।

निगमे गम कहीं ब्रह्म की, क्यों समझे ख्वाबी दम।
सोए करूं सब जाहेर, रूह अल्लाह के इलम।। खु. १२/३६

जिन जानो सास्त्रों में नही, है सास्त्रों में सब कुछ।
पर जीव सृष्ट क्यों पावहीं, जिनकी अकल है तुच्छ।। कि. ७३/२६

मेरे केहेना ब्रह्मसृष्ट को, इन मन जुबां माफक।
झूठी जिमीएँ याही सास्त्रन सों, जाहेर कर देऊँ हक।। कि. ७३/१६

किन्तु वेद-शास्त्रों के द्वारा परम सत्य की तभी पहचान की जा सकती है जब तारतम ज्ञान के प्रकाश में सत्य को जानने का प्रयास किया जाय।

पुराण संहिता एवं माहेश्वर तन्त्र में जहां परब्रह्म को साकार-निराकार से परे चिद्धन किशोर स्वरूप में चित्रित किया गया है, वही वेदों के दर्जनों मन्त्रों में परब्रह्म को किशोर युवा स्वरूप वाला कहा गया है।

'श्रुतो युवा स इन्द्रः' साम. ५/१०/१/६, 'येषाम् इन्द्रो युवा सखा' यजु. ३३/२४, 'आत्मानं धीरमजरं युवानं' अथर्व १०/८/४४ के कथन यही सिद्ध करते हैं।

इसके विपरीत बाईबल, तौरेत, इंजील तथा जंबूर में परब्रह्म के धाम एवं स्वरूप के सम्बन्ध में कुछ भी स्पष्ट ज्ञान नहीं है। यही कारण है कि परब्रह्म की कृपा से कुरान का अवतरण हुआ जिससे कतेब पक्ष से जुड़े हुए समस्त मानव समाज को यह पता चल जाय कि परब्रह्म कौन है, कहाँ है, तथा कैसा है? इसके साथ ही कियामत के समय (ग्यारहवीं सदी, वि.सं. १७३५) में प्रकट होने वाले इमाम महदी (विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक) के स्वरूप श्री प्राणनाथ (अक्षरातीत) की पहचान हो सके। यदि कुरान की साक्षी न हो तो सारा संसार श्री प्राणनाथ जी को कभी भी पूर्ण ब्रह्म के आवेश स्वरूप के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता। वे मात्र हिन्दुओं के ही आराध्य बने रह जाते।

कुरान सहित कतेब पक्ष के सभी ग्रन्थ साक्षी रूप में हैं। कुरान के तीसवें पारे की इन्ना इन्जुलना सूरत में जहां हौजकौसर का वर्णन है वही सूरे मेयराज १५वें पारे में मुहम्मद साहब (अक्षर) की आत्मा के द्वारा परब्रह्म के साक्षात्कार का वर्णन है। अखण्ड का ज्ञान अखण्ड की आत्मा के माध्यम से परब्रह्म का जोश आवेश ही दे सकता है। जीव सृष्टि का कोई भी व्यक्ति अपनी बौद्धिक शक्ति अथवा साधना के बल पर बेहद (योगमाया) या परमधाम का कुछ भी वर्णन नहीं कर सकता।

यह तो सर्वमान्य तथ्य है कि मात्र अक्षर ब्रह्म की पंच-वासनाओं ने ही बेहद मण्डल का वर्णन किया है, चाहे शुकदेव जी ने महारास का वर्णन किया हो या भगवान शिव ने केवल ब्रह्म का वर्णन किया हो अथवा कबीर जी ने सतस्वरूप का वर्णन किया। इनके ऊपर अक्षर ब्रह्म का आवेश (जिब्रील) आया जिससे वे योगमाया के ब्रह्माण्ड, अक्षर धाम अथवा परमधाम के विषय में कुछ कह सके। मुहम्मद साहब के द्वारा जिब्रील के माध्यम से ही कुरान की आयतें अवतरित होती गयी।

यह तो अत्यन्त गौरव का विषय है कि श्री मिहिरराज जी के हिन्दू तन में सच्चिदानन्द परब्रह्म अपने आवेश स्वरूप से विराजमान हुए तथा तारतम वाणी के रूप में परमधाम का वह अलौकिक ज्ञान प्रकट हुआ, जो आज दिन तक इस संसार में कभी भी नहीं आया था।

हकें इलम ऐसा दिया, जो चौदे तबकों नांहीं।
और नांहीं नूर मकान में, सो दिया मोहे सुपने मांहि।। खि. १०/३३

सत्य को परखने के लिये वेद-कतेब साक्षी ग्रन्थ हैं। तारतम वाणी के अवतरण के पश्चात सभी ग्रन्थों का ज्ञान तारतम वाणी में ही समाहित हो जाता है। इस सम्बन्ध में खुलासा ग्रन्थ का यह कथन अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है

साहेब आए इन जिमी, करने कारज तीन।
सो सबका झगड़ा मेट के, या दुनिया या दीन।।

ब्रोध सुर असुरों को, दूजे जादे पैगंमर और।
वेद कतेब छुड़ावने, धनी आए इन ठौर।। खु. १३/८६, ६०

कभी-कभी मुझे आपकी बुद्धि पर तरस आता है। न तो आपने वेद-पक्ष को ही गम्भीरता से पढ़ा है और न कतेब पक्ष को। आपने पौराणिकों तथा वाममार्गियों द्वारा प्रचलित रुढ़िवादी मिथ्या मान्यताओं को ही धर्म समझ रखा है और उसे पोषित करने में अपनी सारी उर्जा लगा रखी है। अपनी नकारात्मक सोच के कारण आपने पग-पग पर तारतम वाणी एवं श्री प्राणनाथ जी पर आक्षेप किया है जबकि मैं यह अच्छी तरह से जानता हूँ कि आपने तारतम भी लिया है और लौकिक दृष्टि से एक बड़े राजकीय पद पर भी रहे है। किन्तु आप जैसे भाग्यहीन इस संसार में विरले ही होते हैं जो हीरों की तिजोरी को शीशे के टुकड़ों से भरा हुआ समझ कर नदी में फेंक देते हैं तथा अपने इस महानतम् कार्य पर तालियां बजाते हुए खुशियाँ मनाते हैं।

सम्पूर्ण तारतम वाणी में सहज रूप से निहित ज्ञान आत्मा को अज्ञान की गहरी रात से उठाकर सत्य के उजाले में ले जाता है। तारतम ज्ञान के सानिध्य से भीतर की तमस हटती है, मन की धुंध धीरे–धीरे पिघलती है, और हृदय में जागनी का प्रथम सूर्योदय होता है। हमारी यही विनम्र अभिलाषा है कि तारतम ज्ञान का यह दिव्य प्रकाश प्रत्येक हृदय में उगे और हम सभी उस प्रेममय प्रकाश को अपनी जीवन–शिरोरेखा बनाकर चलें।

आचार्य सुभाष, सरसावा

भौतिक और आध्यात्मिक विधा में अन्तर

सामान्यतः आध्यात्मिक जीवन को बहुत कठिन माना जाता है जबकि भौतिक जीवन अपेक्षाकृत बहुत सरल होता है - सुबह उठना, अपने घर-गृहस्थ के कार्य को समाप्त करके अपने काम-धंधे के लिए निकल जाना, फिर शाम को लौटना और पुनः अपने कार्य में व्यस्त हो जाना। इसी प्रकार से निरंतर यह चक्र चलता रहता है।

लेकिन आज का जो मानव है, जो भौतिकवादी विचारधाराओं से जो युक्त है और सोचता है कि आध्यात्मिक जीवन को जीना बहुत कठिन होता है, यदि आध्यात्मिक जीवन का अनुसरण करेगा और आत्म-चिंतन करेगा, तो उसे लगेगा कि भौतिक जीवन से आध्यात्मिक जीवन सरल है।

सरल का तात्पर्य क्या है? भौतिक जीवन को जीने के लिए हमें बहुत अधिक पुरुषार्थ करना पड़ता है। यद्यपि आध्यात्मिक जीवन में भी पुरुषार्थ भी करना पड़ता है, जैसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करना। ये मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थ कहे गये हैं। वैशेषिक दर्शन के प्रथम सूत्र में कहा गया है - यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।

धर्म क्या है - अभ्युदय और निःश्रेयस। अभ्युदय का तात्पर्य लौकिक सुख को प्राप्त करना और निश्रेयस का आशय मुक्ति सुख को प्राप्त करना। यही वास्तविक धर्म है। लेकिन धर्म के नाम पर जो एक भेड़ चाल है, अर्थात् जो अंधविश्वास समाज में प्रचलित है, उसको अपनाते हुए आज का मानव सोचता है कि हम ऐसे ही धर्म कर रहे हैं।

धर्म का तात्पर्य होता है, धृ-धारणे शब्द से धर्म शब्द बना है जिसका अर्थ होता है मन, वचन और कर्म से सत्य को धारण करना या उसका जीवन में पालन करना। धर्म न तो किसी संप्रदाय विशेष को माना जाता है, न ही विशेष मत पंथ को। धर्म का तात्पर्य होता है जिसके द्वारा हम लौकिक और परलौकिक दोनों आनंद को प्राप्त करें। धर्म को चतुष्टय कहा जाता है जिसका अर्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष है। लेकिन आज का मानव लौकिक क्षेत्र में उन्नति को तो प्राप्त करना चाहता है लेकिन आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त करने में उसे रूचि नहीं है। इसीलिए ऋषियों ने कहा है कि धर्म के साथ-साथ अर्थ का भी सृजन करना चाहिए। सृजन का तात्पर्य है उसको इकट्ठा करें और उसे धर्म के अनुकूल हम अपने जीवन में भोगें। यदि हमारे जीवन में धर्म होगा तो हम अर्थ को कमाएंगे। यदि हम बिना धर्म के

अर्थ को कमाएंगे - चोरी, छल-कपट या किसी पर अत्याचार कर, तो वह कुछ समय के पश्चात् नष्ट हो जायेगा। धर्मपूर्वक कमाया हुआ धन हमें सतोगुण बुद्धि प्रदान करेगा, हमारे जीवन में निर्भयता लेकर के आएगा, और हमें तमोगुण और रजोगुण से दूर करेगा। यदि अर्थ में विकृति आ जाए तो हम अध्यात्म मार्ग पर आगे नहीं बढ़ सकते।

धन की तीन गति कही जाती हैं- दान, भोग और विनाश। यदि हमनें धर्मपूर्वक धन को कमाया है तो हम उसको दान दें - धार्मिक कार्य में, शिक्षण संस्थान में या किसी गौशाला में। इसके अतिरिक्त, जहां पर गरीब दुखी पढ़ाई करते हैं, जहां पर अनाश्रित लोग रहते हैं, जिनके पास धन न हो, जो अपने जीवन का निर्वाह नहीं कर सकते, ऐसे प्रतिभाशाली बच्चे हैं जो पढ़ना चाहते हैं लेकिन परिवार की स्थिति मजबूत नहीं है, ऐसे छात्रों की शिक्षा के लिए धन का दान करिए।

परमात्मा के लिए दान करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि परमात्मा स्वयं पूर्ण अति पूर्ण है। उसको हमारी दी हुई किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है बल्कि जो कुछ हमारे पास है उसके लिए उसका धन्यवाद करना चाहिए क्योंकि यह सब उसकी कृपा से ही हमें प्राप्त हो रहा है। वेद का सिद्धांत है कि जब हम भोजन करें तो परमात्मा को याद करके ही करें। यदि हम परमात्मा को याद किए बिना भोजन करते हैं तो वो तमोगुण और रजोगुण से युक्त होता है। हमारा मन सतोगुण से रहित हो जाता है और सांसारिक वासनाओं में लिप्त हो जाता है। ऐसे में हम कभी भी आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त नहीं कर सकते न ही निश्रेयस, परम शांति और परम आनंद को प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए हमें हर पल परमात्मा को हमेशा याद करते रहना चाहिए।

यजुर्वेद में परमात्मा से प्रार्थना की गई है- 'याऽऽत्मदा बलदा यस्य विश्वम्, उपासते, याऽऽत्मदा।' इसी प्रकार, योग दर्शन में एक सूत्र आता है- 'ईश्वरप्रणिधानात्'। इन दोनों का यही आशय है कि जब तक हम अपने आप को, अपने तन, मन और जीव को परमात्मा के चरणों में अर्पण नहीं करेंगे, तब तक हमें उसकी प्राप्ति नहीं हो सकती। इसलिए हमें अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ना पड़ेगा। जब हम स्वयं को परमात्मा के चरणों में अर्पण करेंगे तो हमें आत्मिक बल की प्राप्ति होगी। जब तक आत्मिक बल की प्राप्ति नहीं होगी तब तक शरीर भले ही स्वस्थ हो, हम परब्रह्म को प्राप्त नहीं कर सकते।

वेद कहता है- 'एकमेव अद्वितीयम्', अर्थात् परमात्मा एक है, उसके समान कोई दूसरा नहीं है लेकिन क्या हम वेद के इस सिद्धांत को मानते हैं?

आज हम परमात्मा के नाम पर विभिन्न देवी-देवताओं की कल्पना करते हैं उनकी भक्ति करते हैं और एक परमात्मा को भुला देते हैं। जिस परमात्मा ने सूर्य, चंद्र, नक्षत्र और सृष्टि की रचना की है और जिसके संकल्प मात्र से ऐसे करोड़ों ब्रह्मांड बनते हैं और लय को प्राप्त हो जाते हैं, क्या हम उस परमात्मा को जानने और प्राप्त करने के लिए प्रयास करते हैं?

संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, जैसे योगेश्वर श्री कृष्ण, मर्यादा पुरुषोत्तम राम या अन्य कोई, हम उनकी आराधना करते हैं, ताकि हमें लौकिक सुख प्राप्त हो। हमें आध्यात्मिक सुख नहीं चाहिए। यदि हमें लौकिक सुख से परे जाकर आध्यात्मिक सुख प्राप्त करना है तो हमें उस परमात्मा को अपने धाम हृदय में विराजमान करना पड़ेगा। लेकिन

हम माया की छत्रछाया में रहना चाहते हैं। हमें सोते, उठते, जागते हर समय केवल माया दिखाई पड़ती है। संसार की धन-दौलत, मान-प्रतिष्ठा, यही हमें दृष्टिगोचर होती है, हमें परमात्मा कभी दिखाई नहीं पड़ता है। हम कभी अपनी अंतरात्मा की आवाज को नहीं सुनते। हमारी अंतरात्मा क्या चाहती है- हमें आत्मिक सुख मिले, आनंद मिले। आत्मा हमें अंदर की ओर लेकर जाना चाहती है, लेकिन हम संसार में रहकर ही दुखी होते हैं, क्लेशित होते हैं, भय से युक्त रहते हैं।

इस संसार में कोई भी आज दिन तक न सुखी है, न शांति से युक्त है, न आनंद से युक्त है भले ही कोई लाखों-करोड़ों कमाये - कुत्रापि कोऽपि सुखी न। न ही आज तक कोई मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सका है।

मृत्यु के बंधन से कौन छूटेगा - तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति- जिसने परमात्मा को जान लिया और स्वयं को जाना कि हम कौन है, कहां से आए हैं, शरीर और संसार को छोड़ने के पश्चात् जाना कहां है। जिसने जिसने ब्रह्म तत्व को जान लिया, जिसने आत्म तत्व को जान लिया, उसने यह समझ लिया कि शरीर तो नश्वर है, क्षणिक है, एक दिन हमें इसे छोड़कर के अवश्य जाना पड़ेगा। संसार में इसके अलावा कोई भी व्यक्ति मृत्यु के बंधन से दूर नहीं हो सकता। इसलिए हमें संसार की नश्वरता और क्षणिकता को जानना होगा। श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी के किरन्तन ग्रंथ की पहली चौपाई में कहा गया है-

पहले आप पेहेचानो रे साधो, पहले आप पेहेचानो।
बिना आप चीन्हें पारब्रह्म को, कौन कहे मैं जानो।।

कहने का तात्पर्य क्या है, पहले स्वयं की पहचान करनी होगी कि हम कौन है और संसार में आने का हमारा उद्देश्य क्या है? जब तक हम स्वयं को नहीं जानेंगे, तब तक कितने भी उपासना कर लें, ध्यान कर लें, यज्ञ कर लें, तप कर लें, दान कर लें, पुण्य कर लें, सब बेकार है। बिना अपने आत्मिक स्वरूप को जाने हम नहीं कह सकते कि हमने परमात्मा को जान लिया है। परमात्मा, जो करोड़ों सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान है, उसको अपनी आत्मा के धाम हृदय में हमें विराजमान करना ही पड़ेगा।

हम सोचते हैं कि परमात्मा ने इस सृष्टि की रचना की है, और इस सृष्टि के कण-कण में है। जब हम किसी मंदिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में जाते हैं तो सोचते हैं कि हमनें परमात्मा का दर्शन कर लिया। वस्तुतः हमनें परमात्मा का नहीं बल्कि वहां लगे महापुरुषों के चित्रों और मूर्तियों का दर्शन किया होता है। लेकिन परमात्मा उनसे भिन्न है। जिस परमात्मा ने सबकी रचना की है, वह इस प्रकृति मंडल से परे है जिसको धर्म ग्रंथों में 'तमसः परस्तात्' कहा गया है। उसे देखने और जानने के लिए हमें अपनी दृष्टि को इस प्रकृति से परे ले जाना पड़ेगा। हमारी दृष्टि जब साकार और निराकार से परे जाएगी तब हम सच्चिदानंद स्वरूप परब्रह्म को प्राप्त कर सकते हैं।

हम मंदिरों में जाकर के मूर्ति के सामने माथा टेक कर, थोड़ा-सा भोग प्रसाद चढ़ा कर या थोड़ा सा माला-हार चढ़ा कर सोचते हैं कि हमने परमात्मा को प्राप्त कर लिया। लेकिन जो पूर्ण सच्चिदानंद परब्रह्म है, वह आह्वान करने मात्र से कैसे किसी मूर्ति में आ सकता है, उसको भोग लगाने से उस भोग को कैसे ग्रहण कर सकता है? विचार करके देखिए, इस सृष्टि में अनंत कोटि ब्रह्मांड है जिसके अंदर अनंत सूर्य के समान परमात्मा अपनी सत्ता से

व्यापक है। परमात्मा सूर्य से भी अधिक प्रकाशमान है। वह परमात्मा इस निराकार से परे है, बेहद मंडल से परे है, अपने धाम में निवास करता है जबकि इस सृष्टि के अंदर तो केवल उसकी सत्ता है।

यदि उसका स्वरूप इस सृष्टि के कण-कण में होता तो न आज तक किसी की मृत्यु होती, न कोई दुखी होता और हर कोई उसकी तरह अजर-अमर हो लेकिन ऐसा नहीं है। मूर्ति तो केवल महापुरुषों की बनाई जाती है, उनका आदर-सत्कार-सम्मान आवश्यक है लेकिन उन्हें परमात्मा मानकर उनकी भक्ति करना अंधविश्वास है। हमें उस अंधविश्वास से परे होकर एक परब्रह्म की भक्ति करनी चाहिए जो हमारी आत्मा के धाम हृदय में विराजमान है, जो सबका आधार है, सबका स्रोत है और सबको अखंड मुक्ति देने वाला है। हमें उस परब्रह्म की भक्ति करनी है।

गीता भी कहती है- ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति, अर्थात् परमात्मा हमारी आत्मा के धाम हृदय में है लेकिन वह हमें दिखाई नहीं पड़ता, क्योंकि हमारे अंदर माया का पर्दा है। हम उसे ढूंढते कहां हैं, मंदिरों में, तीर्थ स्थानों में, फिर भी हमें सुख, शांति और आनंद नहीं मिलता। संसार की सारी भक्ति छोड़ दीजिए, सारे कर्मकांड छोड़ दीजिए, सारे बंधन छोड़ दीजिए और अपनी अंतरात्मा की ओर जाएं, ध्यान के मार्ग को अपनाएं, और आत्मिक साधना में इतना मग्न हो जाएं कि हमारे हृदय में विराजमान परमात्मा हमें दिखने लग जाए।

हम तीर्थ करते हैं, हम गंगा स्नान करते हैं, व्रत-उपवास करते हैं और सोचते हैं कि हमनें परमात्मा को प्राप्त कर लिया। तीर्थ का तात्पर्य होता है- जनायतानि तीर्थानि, अर्थात् जिसके द्वारा प्राणी इस भवसागर से पार हो। इसी प्रकार, सत्य का आचरण करना, धर्म का आचरण करना, मन-वचन-कर्म से ब्रह्मचर्य का पालन करना, अहिंसा का पालन करना, धर्मग्रंथों का स्वाध्याय करना, और परमात्मा का चिंतन करना सभी तीर्थ हैं। केवल जल आदि में स्नान करने को तीर्थ नहीं कहा गया है।

व्रत किसको कहा जाता है? व्रतं कृणुते, अर्थात् जिसके द्वारा हमारी अंतरात्मा पवित्र हो और हमारे शुद्ध संकल्प हों कि हमारे मुंह से जो भी वचन निकलें उसका प्रभाव सारे संसार पर पड़े। व्रत का तात्पर्य उपवास रखना नहीं है। आज से मैं सत्य का पालन करूंगा, आज से मैं झूठ नहीं बोलूंगा, आज से मैं चोरी नहीं करूंगा, आज से मैं किसी प्राणी को दुख नहीं दूंगा, आज से मैं प्रतिदिन परमात्मा का चिंतन करूंगा, ध्यान करूंगा और धर्मग्रंथ का स्वाध्याय करूंगा, आज से मैं तत्व ज्ञान से युक्त होने के लिए प्रयास करूंगा, ऐसा शुद्ध संकल्प करना, इसका नाम ही व्रत है। व्रत के नाम पर केवल एक दिन के लिए भोजन का त्याग कर लेने से हमारी आत्मा कभी भी पवित्र नहीं हो सकती।

आत्मा पवित्र कैसे होगी? श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्, श्रद्धा से हमारे हृदय के अंदर जो ज्ञान प्रकट होता है उसके द्वारा हम ऋतम्बरा प्रज्ञा को प्राप्त कर सकते हैं।

ऋतम्बरा प्रज्ञा का तात्पर्य है, सतोगुण युक्त बुद्धि, जिसके द्वारा केवल परम सत्य का ग्रहण होता हो, जिसके द्वारा केवल परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकें, जिसके द्वारा परब्रह्म को प्राप्त कर सके।

संसार में दो प्रकार की विद्या कही गई है। एक भौतिक विद्या और दूसरी आध्यात्मिक विद्या। जिस विधा के द्वारा हम संसार के धन साधन को प्राप्त करें, सांसारिक शिक्षा को प्राप्त करें, वह भौतिक विद्या है। आध्यात्मिक विद्या का तात्पर्य है जिससे मनुष्य जीवन की सार्थकता को हम समझें कि मानव जीवन क्या है, इस संसार में हमने जन्म किस

लिये लिया है, क्या हम केवल पशुओं के समान खाना-पीना, सोना और संतान वृद्धि के लिए इस संसार में आए हैं या मनुष्य जीवन का भी कोई लक्ष्य है। इसे समझने के लिए हमें चिंतन करना होगा। ये प्रश्न सबसे पहले हमारे मन में आने चाहिए।

यदि हम संसार में आए हैं तो सर्वप्रथम हमें संसार में आने का उद्देश्य समझना होगा। आज संसार में मानव भेड़ चाल के समान लक्ष्य विहीन होकर प्रकृति की चकाचौंध में भाग रहा है। उसको पता नहीं है कि जाना कहां है, उसका लक्ष्य क्या है? न ही आत्म तत्व को प्राप्त करने के लिए कोई उत्सुक है। आध्यात्मिक जीवन भी हमारे लिए उसी तरह से है। सब चाहते हैं कि जो परब्रह्म, प्रेम आनंद का स्रोत है, को प्राप्त करें, लेकिन उस तक पहुंचने का मार्ग हमें पता नहीं है। आज का मानव भौतिक मानव कहा जाता है जो सोचता है कि उससे बड़ा शक्तिशाली, बुद्धिमान और प्रतिभाशाली इस संसार में कोई है ही नहीं। यदि हमने बड़े-बड़े पहाड़ों को तोड़ कर बड़े-बड़े घर बना लिए, बड़े-बड़े जंगलों को काट कर मकान बना लिए, और बड़ी-बड़ी नदियों को सुखा कर धर्मशालाएं बना दी तो हम सोचते हैं कि हमनें बहुत बड़ी उपलब्धि हासिल कर ली। लेकिन यह एक तुच्छ उपलब्धि है। यदि हमने परमात्मा को जानने का प्रयास नहीं किया तो हमारा जीवन व्यर्थ है।

अंत में, सार रूप से यही कहा जा सकता है कि इस आध्यात्मिक जगत के जो गुह्य रहस्य है, परम तत्व है, हमें उसको जानने और समझने का प्रयास करना होगा। जब हम इसको चिंतन-मनन करके अपने जीवन में आत्मसात् करने का प्रयास करेंगे तो हमारी अंतरात्मा स्वयं निर्णय देगी कि यह बात सत्य है या गलत। हम जिस मान्यता में आज तक पले बड़े हैं, वह मान्यता सही थी या जो श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी के अनुकूल वेद उपनिषद दर्शन आदि जो धर्मग्रंथ है, उनके अंदर जो परम तत्व को कहा गया है वे बातें सत्य हैं। जब हम स्वयं चिंतन करेंगे, उसको समझने का प्रयास करेंगे, तभी यह बातें समझ में आएंगी। इसके लिए हमें प्रतिदिन ध्यान करना पड़ेगा, धर्मग्रंथों का स्वाध्याय करना पड़ेगा, तभी हमारी अंतरात्मा निर्मल होगी और हम परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

श्री जी साहेब जी कौन है ?

नर नारी बूढ़ा बालक, जिन इलम लिया मेरा बूझ।

तिन साहेब कर पूजिया, अर्स का एही गुझ।।(किरंतन १०९/२१)

श्री महामति जी कहते हैं चाहे कोई स्त्री हो या पुरुष, बालक हो या वृद्ध, जिसने भी मेरी इस श्री मुखवाणी को समझ लिया, उसने मुझे अक्षरातीत का ही स्वरुप मानकर पूजा की है। परमधाम की यह गोपनीय बात है अर्थात् परमधाम में श्री राज जी अपने नूरी स्वरूप से विराजमान हैं तो मेरे इस पंचभौतिक तन में अपने आवेश स्वरूप से।

ममता वर्मा

प्रेम अथवा शक्ति ?

इस संसार में जैसा कि हर जीव, जन्तु अथवा प्राणी अपने अपने देव, इष्ट या ईश्वर को चुनने हेतु स्वतंत्र है। किसी को देवगणों को चुनना है, तो किसी को देवताओं को। हर कोई कुदरत/प्रकृति या ईश्वर की तरफ खींचा जा रहा है, क्योंकि सबको शक्ति चाहिए, सिद्धि चाहिए परन्तु शायद ही कोई ऐसा हो, जिसको परमात्मा चाहिए क्योंकि परमात्मा किसी के चढ़ावे या बली अथवा दिखावे के भक्ति से लोगों के बस में नहीं होते हैं। परमात्मा के उस निर्मल आत्मा को जो उनसे अथाह प्रेम करती है उसे तो यह जानने की जिज्ञासा ही नहीं है कि मेरा प्रियतम कितना बलशाली है। उसे यह जानने में कोई रुचि ही नहीं है कि परमात्मा जितना बलशाली है बल्कि वही सर्वशक्तिमान है, वह तो बस प्रेम करती है।

एक तरफ इस दुनिया के लोग जो पूजा पाठ, प्रेम और भक्ति भी करते हैं परन्तु उसके बदले वह अपने आराध्य से किसी न किसी इच्छा अथवा कामना की पूर्ति हेतु व्रत नियम करती है तो दूसरी तरफ वह बिरहिणी है जो बस अपने आराध्य की यादों में तड़प रही है उसे स्वयं की भी सुध-बुध नहीं है, तो इच्छापूर्ति तो बहुत दूर की बात है। एक तरफ यह दुनिया है जिधर शक्ति अथवा प्रेम का प्रभाव तेज देखती है वह अपनी इच्छा अथवा कामना की पूर्ति के लिए अपने प्रथम आराध्य/प्रियतम/ईष्ट को छोड़कर उस द्वितीय शक्ति के प्रवाह में बहने के लिए सज्ज हो जाती है क्योंकि उसे उस द्वितीय शक्ति से उम्मीद हो जाती है कि मेरी मनोकामना यहां शीघ्र पूरी हो जाएगी।

क्या हम सभी इस बात पर लेस मात्र भी चिंतन करते हैं की जिस सूर्य, चंद्रमा को साक्षी मानकर हम कभी किसी आराध्य देव को अपना सर्वस्व मानते हैं, अगले ही पल उनके मंदिर को छोड़कर हम दूसरे मंदिर में अपना सर्वस्व अर्पित कर देते हैं, अगर आप इस सूर्य, चंद्रमा को चेतन मानते हैं, नदियों को देवी मानते हैं तो यह आपके बारे में क्या सोचते होंगे, आपकी आस्था और प्रेम का यह क्या मोल लगाते होंगे।

अरे यह पशु, पक्षी भी अपने प्रेमी या जोड़े से बिछड़ने पर पूरी रात विरह की अग्नि में तड़पते रहते हैं और सुबह का इंतजार करते हैं (चकवा-चकई), कई तो अपने प्राण तक त्याग देते हैं (हंस का जोड़ा)। आपका प्रेम तो उन पशु, पक्षियों के प्रेम के एक करोड़वे अंश की भी बराबरी नहीं कर रहा है। जब आप मृत्यु के पश्चात जैसा कि आप

कल्पना करते हैं कि हम अपने भगवान के पास जाएंगे तो क्या मुंह दिखाएंगे, आप अपनी इच्छा पूर्ति में थोड़ा बिलंब क्या हुआ, आपने तो अपना परमात्मा/देवता/प्रियतम ही बदल दिया। सच्ची प्रीत/लगाव में यह कभी नहीं होता, सच्ची मोहब्बत में अपने परमात्मा/देवता/प्रियतम से लेन-देन जैसी कोई चीज ही नहीं होती, उनसे तो बस प्रेम होता है, अथाह, निस्चल, अटूट एवं अनगिनत।

हम अपने प्रियतम की पूजा करते हैं क्योंकि हमें उनसे प्रेम है। हमें अपने प्रेम के बदले में कुछ भी नहीं चाहिए चाहे हमारे प्रियतम हमें सुख दें अथवा दुःख, यह उनका चयन है। हमारा चयन सिर्फ प्रेम होना चाहिए, सिर्फ प्रेम जो अपने प्रियतम से अथाह हो, निस्चल हो, अटूट हो एवं अनगिनत हो। यदि आप शक्ति चुनते हैं तो आप इसी संसार में भटकते रहेंगे, क्योंकि आप उस शक्ति का प्रयोग इसी संसार की वस्तुओं, अभिलाषाओं एवं अपने स्वार्थ को पूर्ण करने में खर्च कर देंगे। आपको ज्ञान भी नहीं होगा कि आपके इस शरीर में एक आत्मा रहती है जिसको उसके आत्मिक खुराक की जरूरत है। अगर आप उस आत्मा को उसका खुराक प्रदान नही करेंगे तो वह आपका शरीर त्याग कर एक नया तन धारण करेंगी और यह प्रक्रिया तब तक चलेगी जब तक वो किसी ऐसे शरीर में प्रवेश कर ना कर जाये, जो उसको मोक्ष के मार्ग पर ले जाये।

इसलिए हम सभी को एकनिष्ठ प्रेम एवं भक्ति करते हुए अपने प्रियतम के चरणों में अपना सर्वस्व अर्पित करते हुये स्वयं को उनके लिये न्यौछावर कर देना चाहिए। हम मानते हैं कि एक आदर्श प्रेम एवं भक्ति के मार्ग में बहुत बाधाएं आयेगी, आपको बहुत कठिन परीक्षाओं से गुजरना होगा परन्तु यह राहों के काँटे, हमारे धर्म की परीक्षाओं का पीड़ा, प्रियतम के प्रेम के परम आनंद के आगे कुछ भी नहीं है। जब हम अपने प्रियतम के समक्ष बैठकर कहेंगे 'हे धनी, हे मेरे प्रियतम, हम आपके ही है और आपके ही रह गये, माना कि आपकी माया प्रचंड थी परन्तु हमारा प्रेम भी अद्वितीय था। हालांकि यह सब कुछ उनकी तरफ बढ़े हमारे एक कदम के बदले उनका हमारे लिए उपहार होगा जो हजारों कदम हमारी तरफ बढ़ाकर हमें इस प्रचंड लहरों से बचाए रखेंगे।

सार- हमें अपने प्रियतम से प्रेम करना चाहिए, सिर्फ प्रेम। परिस्थितियाँ चाहे जो भी हो अपने देव, इष्ट, ईश्वर या प्रियतम से बिना किसी चाहत, इच्छा एवं स्वार्थ के प्रेम करना चाहिये जो अथाह, निस्चल एवं अटूट हो।

सच्ची साधना बहुदेववाद से ऊपर उठकर एक अनादि परमात्मा की उपासना में निहित है।

— राजन स्वामी

राजदिल, यूएसए

मंदिर या गुरुकुल ?

मंदिर निर्माण का महत्व

भारतीय संस्कृति में मंदिर केवल ईंट-पत्थर की इमारत नहीं, बल्कि आस्था, भक्ति और संस्कृति के प्रतीक रहे हैं।

- आस्था और एकता : प्राचीन काल से ही मंदिर समाज को जोड़ने वाले स्थल रहे हैं। यहाँ लोग पूजा-अर्चना, भजन-कीर्तन, सामूहिक त्योहारों के माध्यम से एकता का अनुभव करते हैं।
- संरक्षण : मंदिरों ने कला, स्थापत्य, मूर्तिकला, शिल्प और संस्कृति को सुरक्षित रखा है।
- मानसिक शांति : मंदिर ध्यान और प्रार्थना का स्थल है। शंकराचार्य से लेकर रामकृष्ण परमहंस तक संतों ने मंदिर को साधना के साधन के रूप में देखा।
- समाज सेवा : अन्नदान, भंडारा, आपदा राहत, गरीबों की सहायता आदि कार्य मंदिरों से होते रहे हैं।

समय सन्दर्भ :

- गुप्तकाल (चौथी-पाँचवीं सदी) में मंदिर संस्कृति का उत्कर्ष हुआ।
- चोल और पल्लव काल में दक्षिण भारत के विशाल मंदिर केवल पूजा-स्थल नहीं, शिक्षा और सामाजिक गतिविधियों के भी केंद्र बने।

किन्तु, यदि मंदिर केवल बाहरी आडंबर, मूर्ति पूजा या पाखंड का स्थान बन जाएं तो वह समाज को जीवित ज्ञान नहीं दे सकते।

गुरुकुल (विज्ञानमय शिक्षण केन्द्र) का महत्व

भारतीय परम्परा में गुरुकुल ही ज्ञान और चरित्र निर्माण के केंद्र रहे हैं।

- ज्ञान का मूल : यहाँ वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण, आयुर्वेद, खगोल, गणित, शास्त्र, संगीत आदि पढ़ाए जाते थे।
- मानव निर्माण : शिक्षा केवल विद्या अर्जन तक सीमित नहीं थी, गुरुकुल में संयम, सेवा, सहिष्णुता, करुणा, सत्य और तपस्या जैसे मूल्य जीवन में उतारे जाते थे।

- विज्ञान और अध्यात्म का संगम : तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों में गणित, चिकित्सा, खगोल, दर्शन और धर्मशास्त्र एक साथ पढ़ाए जाते थे।
- समाज परिवर्तन : एक आदर्श विद्यार्थी न केवल विद्वान होता था, बल्कि समाज सुधारक और राष्ट्र निर्माता भी बनता था।

समय सन्दर्भ :

- ऋग्वैदिक काल में आचार्य-शिष्य परंपरा ने समाज को ज्ञान-समृद्ध बनाया।
- नालंदा विश्वविद्यालय (५वीं - १२वीं सदी) में चीन, तिब्बत, जापान तक से विद्यार्थी आते थे- यह "विश्व-गुरुकुल" का उदाहरण है।

तुलनात्मक दृष्टि

- मंदिर आस्था, श्रद्धा और संस्कृति का प्रतीक है।
- गुरुकुल विवेक, ज्ञान और भविष्य निर्माण का आधार है।
- मंदिर आध्यात्मिक एकाग्रता प्रदान करता है, परंतु गुरुकुल जीवित ज्ञान-मंदिर है।

वर्तमान युग में प्राथमिक आवश्यकता

आज का युग विज्ञान और वैश्वीकरण का है।

- केवल मंदिर निर्माण से समाज की चेतना जागृत नहीं हो सकती।
- समाज को आज ऐसे गुरुकुल चाहिए जहाँ विज्ञान, अध्यात्म और नैतिकता का संगम हो।
- जहाँ वेद-उपनिषद, गीता, कुरान, बाइबल, गुरुग्रंथ, बौद्ध दर्शन और आधुनिक विज्ञान-प्रौद्योगिकी का समन्वय करके शिक्षा दी जाए।
- जहाँ विद्यार्थी जाति, धर्म, भाषा से ऊपर उठकर "मानवता" के आधार पर शिक्षित हों।

समय सन्दर्भ :

- १७वीं सदी में श्री प्राणनाथ जी ने "तारतम्य ब्रह्मवाणी" के माध्यम से यही संदेश दिया कि ज्ञान और सत्य की पहचान ही वास्तविक मुक्ति का मार्ग है।
- आधुनिक समय में महात्मा गाँधी ने नैतिक-आधारित शिक्षा पर बल दिया।
- आज AI, अंतरिक्षविज्ञान और बायो-टेक्नोलॉजी के युग में हमें ऐसे गुरुकुल चाहिए जो "आधुनिक विज्ञान + प्राचीन अध्यात्म" का समन्वय करें।

  मंदिर आवश्यक हैं, क्योंकि वे संस्कृति और श्रद्धा की पहचान हैं।
- लेकिन मानवता की वास्तविक आवश्यकता आज ऐसे गुरुकुलों की है, जहाँ शिक्षा, अनुसंधान, संस्कार और सेवा को मिलाकर "ज्ञान मंदिर" खड़ा किया जा सके।
- ऐसा गुरुकुल ही भविष्य में विश्व कल्याण की आधारशिला बनेगा।

अंत में, सार रूप से कहा जा सकता है कि मंदिर आत्मा को जोड़ता है, लेकिन गुरुकुल आत्मा को ज्ञान और विवेक से प्रकाशित करता है। वर्तमान समय में मंदिरों से अधिक आवश्यक है विज्ञानमय उच्च स्तरीय गुरुकुल, जो वास्तविक ज्ञान मंदिर बन सके।

लिंकन अग्रवाल, रायगढ़

माया के विरुद्ध हथियार

महामति कहे ईमान इसक की, सुकर गरीबी सबर ।
इन विध रूहें दोस्ती धनी की, प्यार कर सके त्यों कर ।।

अक्षरातीत धामधनी श्री राज जी ने इस चौपाई के माध्यम से हम ब्रह्मसृष्टियों को वे पांच हथियार बता रहे हैं, जिनका प्रयोग करके हम माया से बचते हुये अपने लक्ष्य को पा सकते हैं-

1. ईमान

ईमान का तात्पर्य है दृढ़ विश्वास। एक ब्रह्मसृष्टि को इस संसार में कितना ही कष्ट क्यों न मिले, वह राज जी से विश्वास नहीं हटाती। उसे यह विश्वास रहता है कि अगर मैं सत्य मार्ग पर हूं तो सारी दुनिया एक तरफ क्यों न हो मेरे धनी तो मेरे साथ हैं-

आकिन न छोड़े सोहागनी, जो परे अनेक विघन।
प्यारी पिउ के कारने, जीव को न करे जतन ।।

यदि हम अपने को ब्रह्मसृष्टि मानते हैं तो हमें कभी भी राज जी से भरोसा नहीं हटाना चाहिये। ऐसा देखने में आता है जब सुन्दरसाथ को कोई सांसारिक कष्ट होता है तो उनका ईमान डगमगा जाता है और वे अन्य देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करने लगते हैं, जबकि हम यह जानते हैं कि सभी देवी-देवता भी उस अक्षरातीत की आराधना करते हैं। अतः हमें किसी भी परिस्थिति में अपना ईमान एक अक्षरातीत से हटाना नहीं चाहिये। अगर हमें कोई दुःख मिलता है, तो वह हमारे ईमान की परीक्षा है। जब तक ईमान नहीं है, तब तब इश्क नहीं आ सकता और जब तक इश्क नहीं आता, तब तक हम धनी को नहीं पा सकते।

2. इश्क

इश्क का तात्पर्य है अनन्य प्रेम अर्थात् जो प्रेम हम अक्षरातीत श्री राज जी से करते हैं। वह भाव अन्य के प्रति न हो। गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं- 'पुरूषः स परः पार्थ भक्तया लभ्या तु अनन्या' अर्थात् उस उत्तम पुरूष परमात्मा को अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति से ही पाया जा सकता है। इस संसार में जितने मत-पन्थ हैं उनका अनुसरण

कर हम अनेक कल्पों में भी राज जी को नहीं पा सकते, लेकिन प्रेम के मार्ग पर चलकर हम पल भर में ही उन्हें पा सकते हैं। तभी तो वाणी कहती है-

'पन्थ होवे कोट कलप, प्रेम पोहोंचावे मिने पलक।'
'इस्क बिना न पाइये, ए जो नूरतजल्ला हक।'

3. शुक्र

यह फारसी भाषा का शब्द है, जिसका तात्पर्य है- कृतज्ञता या धन्यवाद देने की प्रवृत्ति। दूसरे शब्दों में, किसी के उपकार के बदले शुक्रिया अदा करना। राज जी हम पर पल-पल मेहर करते हैं, चाहे वह जाहिरी रुप से हो या बातूनी रूप से-

महामति कहे ए मोमिनों, तुम पर दम दम जो बरतत।
सो सब इस्क हक का, पल पल मेहर करत।।

धामधनी हम पर दो प्रकार से मेहर करते हैं - पहला, भौतिक रूप से, जैसे धन-सम्पत्ति, विपदा व रोगों से रक्षा आदि। दूसरा, बातूनी मेहर, जिसका तात्पर्य है- हमारे साथ कई बार ऐसी घटना घटित होती है कि हम उसको उस समय समझ नहीं पाते और दुःखी हो जाते हैं कि ऐसा क्यों हुआ? लेकिन हमें उसका कारण बाद में समझ में आता है कि यह तो हमारे कल्याण के लिये ही था। दूसरे शब्दों में, राज जी हमारी आत्मा के कल्याण के लिये गुप्त रूप से जो मेहर करते हैं, उसे बातूनी मेहर कहते हैं। इन कृपाओं के लिये पल-पल राज जी को धन्यवाद देने की प्रवृत्ति को शुक्राना कहा गया है। लेकिन जब हम उनकी मेहर को समझेंगे तभी हम उनको याद करके धन्यवाद भी देंगे।

4. गरीबी

गरीबी का तात्पर्य विनम्रता से है। विनम्रता अर्थात् अहंकार न करना। इस संसार में रहते हुए हम सुन्दरसाथ की चरणरज बनकर रहें। वाणी कहती है-

अब जो घड़ी रहो साथ चरणे, होय रहियो तुम रेणु समान।
इत जागे का फल एही है, चेत लीजो कोई चतुर सुजान ।।

हम इस संसार में धन, पद व प्रतिष्ठा के क्षेत्र में कितने ही ऊपर क्यों न पहुंचें, लेकिन उस बात का घमण्ड़ नहीं करना चाहिये। यह 'मैं' और 'मेरा' की जो भावना है, वही राज जी और हमारे बीच में पर्दे का कार्य करती है। यदि हम अपनी बुद्धि व ज्ञान से सारे संसार को तारतम ज्ञान भी क्यों न दें व सबको अखण्ड़ मुक्ति का द्वार भी क्यों न खोल दें लेकिन हमें उसका अहंकार नहीं करना चाहिये। हमसे सबकुछ कराने वाले राज जी ही हैं, इसलिये हमें अपने अन्दर से अहंकार समाप्त करना चाहिये।

5. सब्र

आपत्तियों में धैर्य जिसका तात्पर्य है, सुख में न इतराना और दुख में न घबराना। सम्मान मिलने पर घमण्ड न करना तथा अपमान मिलने पर हीन भावना न रखना। जीत व हार दोनों में समान भाव रखना। गीता कहती है- 'सुखे दुःखे समं कृत्वा लाभ अलाभौ जयाजयौ।' सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान, जीत-हार सबमें समभाव रखने को धैर्य कहते हैं।

धैर्यशाली पुरूष की निन्दा की जाय या स्तुति की जाय, उनके पास से लक्ष्मी (धन) चला जाय या अधिक धन मिल जाय, चाहे उनको लम्बी आयु होने का पता चले या आज ही मरना पड़े, वे लोग धर्म के पथ से विचलित नहीं होते। जिस प्रकार सूर्य उगते हुए भी लाल होता है तथा अस्त होते हुए भी लाल होता है, उसी प्रकार महान लोग सम्पत्ति व विपत्ति में समान रहते हैं। घबराते वे हैं जिनको राज जी पर पूर्ण विश्वास नहीं होता। वाणी कहती है-

जिन हरबराओ मोमिनो, हुकम आपे करत है काम।
खोल देखो दृष्टि रूह की, जिन देखो दृष्टि चाम।।

हमें अपनी अन्तर्दृष्टि से देखते हुए दुःख में घबराना नहीं चाहिये तथा सुख में भी घमण्ड नहीं करना चाहिये, क्योंकि हम तो केवल माध्यम हैं, करवाने वाले तो राज जी हैं। ये पांचों गुण एक-दूसरे के पूरक हैं। हमें इन गुणों को अपनाते हुए जागनी के पथ पर अपने कदम बढ़ाने चाहिये।

एक भाव

आओ सखी चलो खुद के अंदर झाँकते हैं।
क्या सच में हम अपने प्राणवल्लभ को जानते हैं ?
कभी जरा सी हुई जो भलाई हमसे,
उसे उपलब्धि मान करके खुद को खुदा मानते हैं।
आये हैं हम एक ही परमधाम से,
यहाँ आकर सभी को हम बाँटते हैं।
कितना याद किया धनी को ?
कब कब उनके लिए हम रोये ?
तन को उज्जवल करने में लगे रहे,
पर मन का मैल न धोये।
यह बात हम सब जानते हैं,
पर कहने में कतराते है ।
आओ सखी चलो खुद के अंदर झाँकते हैं।
पाया निजनाम तो मिटेगा माया का अँधेरा,
फिर क्यों हम माया के विघ्नों से घबराते हैं।
झूठ कपट छल कर्म बुरे जाने हम सब,
तो क्यों इन्हें करके हम हर्षाते हैं ?
चाह हमारी है धनी मिलन की,
फिर भी उन्हें न हम हृदय में बुलाते है।
झूठी शान झूठे मान के चक्कर में पड़ कर धनी से दूर हो जाते है।
आओ सखी चलो खुद के अंदर झाँकते हैं।

डॉ. मनीषा दुबे, जयपुर

पृथ्वी परिक्रमा और परना धाम

श्री निजानंद सम्प्रदाय में श्री ४ पद्मावती पुरी धाम, पन्ना जी में हर वर्ष कार्तिक पूर्णिमा को पृथ्वी परिक्रमा का पर्व आत्म-जागृति के उद्देश्य के साथ बड़ी उमंग और उल्लास से मनाया जाता है जिसमें ब्रज, रास, जागनी एवं परमधाम चारों स्थानों की लीलाओं का साक्षात अनुकरण कर इन दिव्य लीलाओं का आनंद सुन्दरसाथ प्राप्त करते हैं।

प्रतिबिंब लीला से वास्तविक लीला में प्रवेश की लीला ही पृथ्वी परिक्रमा मनाये जाने का महत्वपूर्ण कारण है। क्योंकि ब्रज की लीलाओं की याद में वर्ष भर त्यौहार मनाये जाते हैं और रास की याद में शरद पूर्णिमा का महोत्सव मनाया जाता है जिसके एक माह बाद पृथ्वी परिक्रमा का पर्व आता है।

परिक्रमा क्या है ?

आध्यात्मिक विज्ञान के अनुसार प्रदक्षिणा या परिक्रमा का अर्थ है - बांई ओर से दाई ओर श्रद्धापूर्वक घूमना जिससे कि दाहिना पार्श्व सदैव अपने इष्ट-आराध्य की ओर हो जिसकी परिक्रमा की जा रही है।

'देत परिक्रमा कर्म सब छूटे, यह सुख पंचम निशदिन लूटे।'

परिक्रमा का भारतीय संस्कृति में बड़ा महत्व है। मथुरा- वृन्दावन में ८४ कोस परिक्रमा की परम्परा है जहां गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा कर लोग अपनी मनोकामना पूर्ण करते हैं। चित्रकूट धाम में भी परिक्रमा का विशेष महत्व है। श्री गणेश और कार्तिकेय में जब ब्रह्मांड की परिक्रमा करने की होड़ लगी तो गणेश जी ने शिव और पार्वती की परिक्रमा करके परिक्रमा का अद्वितीय उदाहरण सृष्टि के समक्ष प्रस्तुत किया।

इस विश्व ब्रह्माण्ड में छोटे से अणु-परमाणु से लेकर विशाल आकाश गंगायें, ग्रह, उपग्रह सभी गोलाकार हैं। हमारी गोलाकार पृथ्वी सहित सभी नौ ग्रह उस विशाल गोलाकार सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं। ब्रह्मांड का शब्दार्थ है अण्डा की भांति गोलपिण्ड, जिसके कण-कण में परिक्रमा का अलौकिक नृत्य चल रहा है। आकाश में दौड़ते बादल, सागर की तरफ दौड़ती नदियां, पशु-पक्षी सभी परिक्रमा के नृत्य में संलग्न हैं।

महामति प्राणनाथ जी अपनी किरंतन वाणी में कहते हैं-

ए ब्रह्माण्ड सर्वे रामत, उपनी छे एनी इच्छाएं।

अर्थात् पूर्णब्रह्म परमात्मा की स्वेच्छा से प्रकट यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अपनी नृत्य लीला में अपने इष्ट-आराध्य की प्रदक्षिणा ही कर रहा है।

जेती परिक्रमा निजधाम की, सातों स्वरूप श्री राज।
सो सारे परना बसे, सैयन के सुख काज।।

निजानंद सम्प्रदाय में परिक्रमा का दृष्टिकोण

विक्रम संवत १७४० में परब्रह्म अनादि अक्षरातीत स्वरूप श्री प्राणनाथ जी अपने हजारों ब्रह्ममुनी परमहंस सुन्दरसाथ सहित परना परमधाम पहुंचे। उन्होंने परमधाम का दिव्य झण्डा पन्ना नगरी में फहरा कर परम पुनीत मुक्तिपीठ की स्थापना की। विन्ध्याचल पर्वत की दिव्य भूमि का चयन श्री राज जी ने मूल मिलावे में बैठे हुए ही कर लिया था कि यही पावन भूमि कलियुग में सच्चिदानंद परब्रह्म की लीला स्थली बनेगी।

पन्ना नगरी प्राकृतिक संपदाओं से भरपूर है। इसके चारों ओर हरियाली ही हरियाली है। जिस प्रकार परमधाम में चारों ओर आठ सागरों से घिरा रंगमहल शोभायमान है उसी प्रकार जागनी ब्रह्मांड के मूल मिलावा परना धाम की भौगोलिक पृष्ठभूमि आठ तालाबों - लोकपाल सागर, धर्मसागर, कमला सागर, नृपत सागर, महाराज सागर, बेनी सागर, गोविन्द सागर और हरि सागर - से आहत हैं। इसके अतिरिक्त कई जलप्रपात, कुण्ड और घाटियों से घिरा हुआ पद्मावती पुरी धाम अध्यात्म जगत का केंद्र बिन्दु है।

भागवत पुराण में वर्णन है कि रास के मध्य जब श्री कृष्ण जी अन्तर्धान होते हैं, तब सखियाँ बैचैन हो जाती हैं जिसके कारण ही उन्हें पहली बार प्रियतम से बिछड़ने के विरह का अनुभव होता है। कुछ समय पश्चात् जब वे प्रकट होते हैं तब सखियां उन्हें चारों ओर से घेर लेती हैं और अनुकरण लीला करके अपने मन में व्याप्त अहंकार का नाश कर उनकी परिक्रमा करती हैं।

उसी प्रकार पन्ना धाम में स्थित श्री गुम्मट जी मंदिर में साक्षात पूर्णब्रह्म परमात्मा विराजित हैं। शरद पूर्णिमा को रास लीला में जिस प्रकार से अदृश्य होकर दूर हो गये थे, अब पुनः न हो जाय, इसलिये सभी ब्रह्म अगनाएं उन्हें घेर कर उनकी परिक्रमा करती हैं और उन्हें सदा के लिए अपने हृदय धाम में बसा लेती हैं।

इसी पवित्र भावना की जागरूकता ही जागनी रास का परम रहस्य है। द्वापर में श्री कृष्ण ब्रज मण्डल में रहे और विभिन्न लीलायें महारास की जिसके परिणामस्वरूप वह भूखण्ड अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया। ठीक उसी प्रकार कलियुग में यही महत्ता पन्ना धाम को प्राप्त है। पूर्णब्रह्म परमात्मा अपनी जागनी लीला करने के लिये हजारों ब्रह्ममुनि सहित इस भूमि पर पधारे, यहाँ विचरे और दिव्य लीलाएं की। अखण्ड धाम का महारास भी पन्ना की भूमि पर हुआ जो कलियुग में ब्रज मण्डल की भांति पवित्र और मुक्ति प्रदान करने वाला है। आज भी समास्त सुन्दरसाथ पन्ना धाम की परिक्रमा करके पूरी पृथ्वी की परिक्रमा कर लेने का पुण्य लाभ प्राप्त करते हैं।

पूर्णब्रह्म परमात्मा का साक्षात्कार करने वाले ब्रह्ममुनियों का स्पृश कण-कण में विद्यमान है। प्रकृति और परमात्मा के पारस्परिक आत्मिक संबंध का स्मरण करने के लिये आज भी इस परिक्रमा के माध्यम से पहाड़, नदियों, वृक्षों, लताओं जिन्होंने कभी यहां परमहंसों का सान्निध्य पाया था, दिव्य लीलाओं को पाने की आकांक्षा ही इस परिक्रमा का उद्देश्य है।

पृथ्वी परिक्रमा के दिन प्रातः ५ बजे से ही सभी सुंदरसाथ सभी मंदिरों में मंगल आरती के पश्चात् भजन मंडली के साथ मन्दिर के अन्दर व बाहर की परिक्रमा प्रभाती गायन करते हुए लगाते हैं-

प्रातः उठि महाराज ने जसोदा जी जगावे
पिया विनती कैसे करूं, मति मद हमारी
जोवन गरब न कीजिए, जग जीवन थोरा

इन प्रभातियों का भाव यह है कि जागनी के इस तीसरे ब्रह्मांड में आकर हम अपने धनी को सदा याद रखें और अपने अनमोल मानव जीवन का सार्थक बनायें। गायक मंडली पुनः ११ से १२ बजे सभी सुंदरसाथ को एकत्रित कर 'जागनी आई, अब जागो सखी री, परना की राज लगे प्यारी जहां आये श्री राज' गाते हुए महारानी जी मन्दिर से होकर चोपड़ा मन्दिर, खिजड़ा मन्दिर सहित नगर परिक्रमा करते हुए पूर्णिमा की शीतल चांदनी का आनंद लेते हुए, कमला बाई के तालाब के किनारे से बाईपास रोड पर श्री बाईजू राज महारानी जी के मंदिर में दर्शन करके ब्रह्म चबूतरे पर आकर अपनी-अपनी परिक्रमा पूर्ण करते हैं।२५ पक्ष धामधनी के हृदय में बसा कर ही हम चोपड़ा मन्दिर में नादरी गाते हुए -

सुन जाग सखी री, जागनी आई।
सुनत तारतम चोक परी, सतगुरु आन जगाई।

तारतम के उजाले से हमनें अपने श्री प्राणनाथ जी की पहचान कर ली। अब हम एक पल के लिए भी जागनी रास को नहीं छोड़ेंगे। आत्म-जागृति की सजगता को कायम रखना ही परिक्रमा की पावन रीत है।

जागो और जगाओ।

ए वचन सुनत बाढ़े बल, सोई लेसी तारतम को फल

तारतम ज्ञान का वास्तविक फल वही प्राप्त करेगा जिसके प्राण इन वचनों को सुन स्पंदित हो उठें, और जिसका हृदय आत्मज्ञान के पथ पर चलने की उत्कंठा तथा उत्साह से भर जाये। ऐसी जिज्ञासु और तल्लीन आत्मा ही इन दिव्य वचनों का सार पकड़ सकेगी और इनके वास्तविक लाभ को अनुभव करेगी। अन्य लोग इन वचनों का बोझ मात्र ढोते रह जाएंगे।

परिक्रमा : एक भाव

रास रमण करते-करते, श्री जी ने देखा सखियों का अभिमान,
अंतर्यामी ने समझ लिया मन में बढ़ता अहंकार।
हुए धनी तब अंतर्धान, सखियों का रो-रोकर हुआ हाल बेहाल।

विरह वेदना में तपकर, जब टूटा मान गुमान,
श्री जी प्रकट हुए तब हुआ महारास।
अपने प्रीतम को पाकर वृक्षों की लताओं जैसा करने लगी मनुहार।
यही है अपने प्राणेश्वर की सानिध्यता में रहने का, परिक्रमा का उद्देश्य महान।

युग-युग से सनातन धर्म में चला आया यह पर्व महान,
श्री गणेश और कार्तिकेय ने जब लगाई परिक्रमा।
माता-पिता ही चारों धाम है, गूंजे स्वर ब्रह्मांड में।
कलयुग में फिर, श्री प्राणनाथ जी ने मानव देह की महिमा समझाई।

सोए हुए नर को उसकी, इस धरा पर आने की कीमत समझाई,
चारों तीर्थ मन के अंदर, नित्य डूबो तुम इनके अंदर।
जोबन का ना करो गर्व, यह तो पानी का है बुलबुला
कब सांसों की गिनती थमे, नहीं भरोसा पल भर का।

प्रेम, समर्पण से मन को जीतो,
करो श्री चरणों में इसको समर्पित,
मानव बन जग को सुंदर बनाओ।
प्रेम, संयम, साधना का पुष्प हर दिल में महकाओ,
कर परिक्रमा अपने मन की प्रतिफल कुविचारों को हटाओ,
पकड़ ईश्वर के चरणों को तुम निर्मल आतम बन जाओ।

अहंकार की पोटली को ना धारण तुम कर पाओ,
इसलिए यह रीत प्रेम-प्रीत सिखलाती है।
ईश्वर का हृदय में वास है, भूले मानव को याद दिलाती है।

–मनीषा दुबे

दिलीप, यूएसए

पुण्यतिथि विशेष

सद्गुरु धर्मवीर जागनीरत्न सरकारश्री

मानव जीवन केवल देह-यात्रा नहीं है; यह तो आत्मा का तीर्थ है- एक ऐसा तीर्थ जहाँ कुछ दुर्लभ आत्माएँ अपने भीतर बसे प्राणनाथ रूपी सत्य-सूर्य को प्रकट कर पृथ्वी को प्रकाश देती हैं। सरकारश्री श्री जगदीश चंद्र जी ऐसी ही तेजस्वी पूर्ण जागृत आत्मा हैं, जिनके जीवन से "मोमिन" होने का सच्चा अर्थ जीवित प्रमाण के रूप में प्रकट होता है।

'सच्चे मर्द मोमिन' का आदर्श मोमिन केवल धार्मिक शब्द नहीं; यह उन आत्मिक योद्धाओं का परिचय है जो-सत्य के मार्ग पर अडिग रहते हैं, अपने भीतर की निज-सरूप चेतना को जागृत करते हैं और संसारिक मोह के तूफान में भी अपने प्रीतम मासूक की प्राप्ति को सर्वोपरि मानते हैं।

जागनी रत्न सरकार जी का जीवन इन्हीं गुणों का प्रत्यक्ष अनुभव है। उनका पुरुषार्थ बाह्य पराक्रम में नहीं, बल्कि आत्मा के अनुशासन और अंतर्यात्रा की दृढ़ता में देखा जाता है। वे उन विरलों में हैं जिन्होंने जीवन को साधना बनाया और साधना को जीवन।

प्रारम्भिक आत्मिक आकर्षण - 'नाम-रस' से 'स्वरूप-रस' की ओर बहुत-से ज्ञानीजन शास्त्र जानते हैं, बहस करते हैं, वेदों, एवं धर्मशास्त्रों के मर्मज्ञ है परन्तु कम ही आत्माएँ वह सरलता धारण कर पाती हैं जिसके द्वारा 'नाम' भीतर उतरकर 'स्वरूप' बन जाता है। सरकार श्री में बचपन से ही ऐसी निर्मल प्रवृत्ति थी दिव्यता के प्रति सहज आकर्षण, गुरु-वाणी के प्रति अद्भुत ग्रहण-शक्ति, और सत्य को अनुभव करने की बेचैनी। यह बेचैनी ही आगे चलकर आत्मा-जागृति का कारण बनी।

आत्मा-जागृति- जब भीतर का द्वार खुला आत्मा-जागृति किसी एक घटना का नाम नहीं, बल्कि एक आंतरिक सूर्य का उदय है। सद्गुरु जी का यह अनुभव तीन चरणों में पूर्ण हुआ -

(क) 'मैं कौन हूँ?' का गम्भीर अन्वेषण संसार के शोर के बीच उन्होंने भीतर एक शांत प्रश्न को पकड़ा- "मेरी सच्ची पहचान क्या है?" यह प्रश्न साधारण नहीं; यह वह आह्वान है जिसे केवल चुनी हुई आत्माएँ सुन पाती हैं।

(ख) श्री प्राणनाथजी की 'तारतम वाणी' का प्रत्यक्ष प्रभाव जब किसी मोमिन के हृदय में पवित्रता पर्याप्त होती है, तभी वाणी केवल शब्द नहीं रहती- वह आत्म-बोध का माध्यम बन जाती है। जागनी रत्न सरकार श्री के साथ भी यही हुआ। 'तारतम' के गूढ़ पदों ने उनके भीतर वह द्वार खोला जहाँ- जीव का बंधन समाप्त होता है, और 'निज-धाम' एवं निज स्वरूप की स्मृति प्रकट होती है।

(ग) 'मैं वही हूँ' का नितांत अन्तर्दृष्ट अनुभव यह वह अवस्था है जब आत्मा समझती नहीं-पहुंच जाती है। वर्णन समाप्त हो जाता है और अनुभूति आरम्भ होती है। यही अनुभव उनके जीवन का मोड़ बना और यही से "मोमिन पुरुषार्थ" की चेतना दिव्य रूप से जागी। नितांत आध्यात्मिक जीवन- एक निरंतर तप आध्यात्मिकता उनके लिए कोई अवसरिक अभ्यास नहीं, बल्कि श्वास-समान सतत प्रवाह है।

उनके जीवन की प्रमुख विशेषताएँ-

तटस्थता और समत्व

मान-अपमान, लाभ-हानि, सुख-दुःख सबको उन्होंने एक ही दृष्टि से देखा। यह समत्व बिना ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति तथा आत्मा जागृति सम्भव ही नहीं है ।

प्रामाणिकता और निष्कपटता

वे जो कहते हैं, वही जीते हैं; और जो जीते हैं, वही दूसरों को प्रदान करते हैं। उनके जीवन में कोई आडम्बर नहीं- केवल सत्य की सरलता।

सेवा में आत्मा-चेतना

उनकी सेवा केवल कर्म नहीं, बल्कि भाव-यज्ञ है। वे जिस भी कार्य को स्पर्श करते हैं, उसमें आध्यात्मिक ऊष्मा स्वतः प्रवाहित हो जाती है। सद्गुरु शरण की अखण्ड भावना जीवन के हर निर्णय में, हर मोड़ में, हर योजना में- उनके भीतर एक ही ध्रुव-तारा चमकता है : "सद्गुरु ही मार्ग हैं, सद्गुरु स्वरूप प्रियतम धनी ही प्रकाश।"

समाज के लिए प्रेरणा - एक जीवित सन्देश

सद्गुरू सरकार श्री उन दुर्लभ पुरुषों में हैं जिनकी उपस्थिति ही शिष्य के भीतर सचेतना जगाती है। उनसे मिलकर लोग कहते हैं-"उनके पास शब्द कम हैं, पर सत्य अधिक है।"

कुछ लोग सोचते है की सरकार श्री को संस्कृत की कोई जानकारी नहीं थी परंतु मैं समझता हुँ ,वेदों की भी उत्पत्ति जिस अक्षर ब्रह्म के हृदयस्थल होती है, उस अक्षरब्रह्म से भी परे परब्रह्म प्रियतम के प्रेममय संस्कृति से सदैव सुसंस्कृत थे और मेरे जैसे हजारों आत्मा खोजी जनों को उस निजानन्दीय संस्कृति से सुसंस्कृत किया। उनका जीवन हमें सिखाता है- मोमिन होना कठोरता नहीं, पवित्रता है। आध्यात्मिकता त्याग नहीं, निज-अस्तित्व की पुनःप्राप्ति है और सच्चे गुरु के चरणों में समर्पण पराजय नहीं, सच्ची विजय है।

धर्मवीर जागनी रत्न सरकार श्री का जीवन वह उज्ज्वल अक्षर है जो स्मरण कराता है कि जब मनुष्य अपने भीतर का द्वार खोल देता है, तो जीव से शिव, मानव से मोमिन, आत्मा से पर आत्मा, पर आत्मा से परमात्मा, तक की यात्रा स्वयमेव पूर्ण हो जाती है।

वे केवल एक व्यक्ति नहीं- एक चेतना, एक दृष्टि, एक पथ हैं, जो हर साधक को यह प्रेरणा देते हैं :

"अपने भीतर के अखण्ड निश्वत या प्रकाश को पहचानो-वही तुम हो।"

एक आत्मा जागृति प्राप्त सुन्दरसाथ के लिए लौकिक देह त्याग मात्र धामगमन नहीं है अपितु धाम से अवतरित होने के पश्चात् इस क्षण भंगुर नश्वर शरीर के ही माध्यम से समस्त संसार के बन्धनों से निःस्पृह होकर धनी, धाम और निज-आनंद में सराबोर होना ही वास्तविक धाम गमन है। सरकारश्री जी के हम अंग संग है, आप सदैव हमारे दिल में विराजते है और हम उनके दिल में।

सरकार श्री को २५वें स्मृति दिवस पर ज्ञानपीठ की श्रद्धांजलि

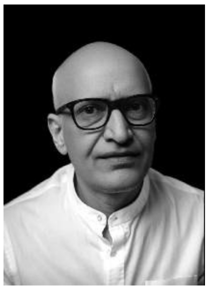

दिनकर ने अपनी कविता में लिखा है– ''जिसके प्रेम में त्वरा हो, आतुरता, उत्कंठा और बेचैनी हो, वह परिवर्तन लाकर रहेगा।'' सरकार श्री का सम्पूर्ण जीवन इसी सत्य का जीवंत प्रमाण है। उनके हृदय की व्याकुलता और विह्वलता जब साधारण भाषा में अभिव्यक्त हुई, तो उसकी अनुगूंज ने सैकड़ों निष्प्रभ हृदयों में प्रेम और चेतना का संचार कर दिया। यही कारण है कि निजानंद समाज के 20वीं सदी के उत्तरार्ध में सरकार श्री का नाम एक महान सिद्धांत–प्रणेता के रूप में अमर हो गया।

देह नश्वर है, परंतु विचार अमर होते हैं। कोई भी महान आत्मा अपनी जीवनशैली, विचारधारा और सेवा के माध्यम से युगों तक जीवित रहती है। सरकार श्री की दिव्य विरासत को जीवित रखने का एकमात्र मार्ग यही है कि हम उनके सिद्धांतों को अपने जीवन में आत्मसात करें। उनकी सेवा–भावना, अडिग सत्यनिष्ठा और अटूट विश्वास को जितना हम अपने हृदय में उतारेंगे, उतना ही उनके सानिध्य का अनुभव कर सकेंगे।

यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी, यही सरकार के प्रति प्रेम की साकार अभिव्यक्ति होगी और इसी में सरकार के स्वप्न का साकार होना निहित है।

सरकार श्री के चरणों में कोटि–कोटि नमन!

राहुल श्रीमाली, दाहोद

रामत आंबा नी

योगमाया के ब्रह्माण्ड में खेला गया रास अनेक रहस्यों से सजा हुआ है। और हो भी क्यों न? जब यह खत्म हो जाने वाला कालमाया का ब्रह्माण्ड इतने रहस्यों से भरा हुआ है तो फिर यह तो अखंड रास की लीला स्वयं धामधनी के द्वारा की गई है। अखंड रास का हर एक पल अनेकों राज अपने आप में संजोए हुए है। परन्तु कोई विरला ही इन्हें जान पाता है।

रास के विषय में पूज्य श्री राजन स्वामी जी का कथन पूर्णरूप से उचित है कि योगमाया के ब्रह्माण्ड में हुई रास लीला के दर्शन के लिए और तारतम वाणी में वर्णित उन रामतों के रहस्यों तक पहुंचने के लिए हमें सबसे पहले शरीर और संसार से परे होना होगा, तभी रास की लीला हमें समझ में आएगी। अन्यथा लौकिक जीव भाव से हम इसे गली कुचों में होने वाली सामान्य रासलीला के समान ही समझेंगे। जबकि वास्तविक रूप में रास का रहस्य कुछ और ही है जो तारतम वाणी में जगह जगह वर्णित है।

अब यहां कह रहे हैं कि रामत आंबा नी कीजे अर्थात् पियूजी आप आम के पेड़ का धड़ बन जाइये और हम आपके मूल से (चरण से) लिपट जाएं ताकि अन्य सखियां हमें आपसे जुदा न कर पाएं। और अगर हम उन सखियों के खींचने के कारण आपसे अलग हो जाएं तो आप हम पर हंसी करना और हम सब मिलकर इस विनोद में सहभागी बनेंगे।

वास्तव में, इस जागनी के खेल में यही तो हो रहा है। हम जैसे ही धड़-रूपी श्री राज जी के चरणों या वाणी से लिपटने की कोशिश करते हैं वैसे ही माया या अन्य लीलाएं हमें अपनी और खींचने लगती हैं और हमसे राज जी के चरण, चितवनी या वाणी मंथन छूट जाता है और इस खेल में रास की रामत की तरह ही हम सबकी हंसी होती है।

अतः हमारे लिए जरूरी है कि हम बस धड़ के मूल से लिपट जाएं अर्थात् 'छिपके साहेब कीजे याद' वाली स्थिति में आ जाएं। इस जहाँ से इन झंझटों से दूर होकर बस धनी के चरणों से आत्मा के दिल को जोड़ें। रास ग्रंथ के उथला के वचन प्रकरण में हमें बहुत ही सुंदर शब्दों में सीख दी गई है कि हमे कैसे राज जी के चरणों से लिपट कर रहना है-

फूल फूल्या जेम वेलडी, ते ता विकसे सदा रे सनेह।
वछूटे ज्यारे वेल थी, त्यारे ततखिण सुके तेह।।(९/४२)

अर्थात् हमें फूल जिस तरह लता से लिपट कर रहते हैं बस इसी तरह हमें धनी के चरणों से घुघरी की तरह लिपट कर उनसे बंध जाना है। तभी 'हवे माया गई पोताने घेर' वाला चरण हमारी आत्मा के लिए सार्थक हो पाएगा।

इसी रास में अंतर्ध्यान की लीला है और बाद में पुनः प्रगट होकर 'सखी सहुने मल्या एकांत' वाली भी लीला है। यहां जागनी के ब्रह्माण्ड में भी वाणी मिलते ही हमें यह आभास होने लगता है कि राज जी तो मेरे बिल्कुल सामने हैं पर जैसे-जैसे हम वाणी की गहराई में उतरते हैं वैसे-वैसे यही अंतर्ध्यान वाली लीला शुरु होती है कि वे पास तो हैं विश्वास भी पूर्ण है पर वे सामने नहीं हैं न ही वह शरबती दीदार है और फिर जैसे रास में इंद्रावती जी कहती है कि 'मूल रामतडी कीजिए' तब धनी सामने आयेंगे वही स्थिति हमारे सामने आकर खड़ी हो जाती है। ठीक वैसे ही हमें इस जागनी की लीला में 'तीन लीला चौथी घर की' यह चौथी घर की मूल लीला मूल अर्स की धनी से इश्क़ की लीला में आत्मा को उतारना होता है तब जाकर यह माया का पेड़ रूपी पर्दा हटता है और यह पेड़ हटते ही राज जी अखंड पूर्ण सिनागर में हमारे सामने होते हैं।

इस छठे दिन में अब हमारे प्रियतम हमारे धनी हमारे प्राणनाथ ही हमारा 'रास' है, हमारे धनी ही हमारी मूल अर्स की 'रामत' हैं, हमारे धनी ही हमारा 'सिनगार' है। हमें बस धनी के मूल चरणों से ही लिपट जाना है और यही एकमात्र इस 'बल हरया तारे फंदडे' वाली स्थिति से छूटने का पहला और आखिरी उपाय है।

फेर फेर कहूँ मेरे साथ, नीके पहचानों प्राण को नाथ

जीवन की वास्तविक सार्थकता इसी में निहित है कि हम प्राणनाथ जी के पूर्ण स्वरूप की पहचान कर पाएं। जिनकी सत्ता समस्त अस्तित्व का मूल स्रोत है, जो समस्त आत्माओं का प्राणधार है– अपने भीतर उस दिव्य स्वरूप की पहचान को जागृत करना जीवन का सर्वोच उत्त्कर्ष है।

उत्तर भारत में जागनी यात्रा

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के तत्वावधान में १८ अक्टूबर, २०२५ से शेरपुर की धर्म धरा से ब्रह्मवेता, वाणी मर्मज्ञ और वेद-शास्त्रों के ज्ञाता श्री राजन स्वामी जी के नेतृत्व में जागनी यात्रा-२ का प्रारंभ हुआ। यह यात्रा उत्तर भारत और उससे लगते हरियाणा और पंजाब के विभिन्न स्थानों में लगभग दो माह चलेगी जिसका प्रमुख उद्देश्य तारतम वाणी का प्रचार-प्रसार कर इसे जन-जन तक पहुंचाना है।।

आज का युवा केवल परंपरा नहीं, बल्कि तर्क और अनुभव के संग धर्म को समझना चाहता है। इसी उद्देश्य से जागनी यात्रा में यह प्रयास किया जा रहा है कि श्री प्राणनाथ जी के निजानंद दर्शन को वर्तमान मूल्यों, तार्किक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया जाए। इस प्रकार वाणी चर्चा, गायन और आध्यात्मिक प्रश्नोतरी पर केंद्रित यह जागनी यात्रा एक नये अध्याय का सूत्रपात कर रही है।

इस अंक के प्रकाशन तक इस यात्रा के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश राज्य और उससे लगते पंजाब के निम्न स्थानों पर कार्यक्रम आयोजित किए जा चुके हैं-

शेरपुर, बडगांव, रोनी मंगनपुर/पिपलहेड़ा, टपरी, टाबर, नकुड़, भायला, कुरड़ी, सहारनपुर, यमुनानगर, सबगा, अम्बाला, बिजलपुर, अम्बाला, नारायणगढ़, पंजाब, रंजीतनगर, पटियाला, सोलन, हिमाचल प्रदेश, अम्बाला केन्ट, सधोली कदीम, ठस्का, सहारनपुर, रुड़की, मुज़फ़्फ़रनगर, रतनपुरी, नया गाँव, खटौली, मेरठ, बदनोली, गाज़ियाबाद, लक्ष्मी नगर, दिल्ली, नोएडा, अनूपशहर, बुलंदशहर, सिकंदराबाद, भिवानी, रोहिणी, दिल्ली, गुरुग्राम, पीतमपुरा, दिल्ली, रुद्रपुर, उत्तराखण्ड।

उल्लेखनीय है कि जागनी यात्रा की लगभग हर जगह मीडिया कवरेज हुई। पत्रकारों और मीडिया प्रतिनिधियों को पूज्य स्वामी जी के साक्षात्कार हेतु विशेष रूप से आमंत्रित किया गया, ताकि ब्रह्मवाणी का दिव्य संदेश अधिकाधिक आत्माओं तक पहुँच सके।

यह यात्रा सेवाभावी सुंदरसाथ के तन, मन और धन से किये जाने वाले सहयोग से ही चल रही है जिसके लिए ज्ञानपीठ उनका हृदय से आभार प्रकट करता है।

यात्रा के दौरान अनेक सुंदरसाथ ने तारतम ग्रहण कर अपना आत्मिक सम्बन्ध धामधनी अक्षरातीत श्री राज जी से जोड़ कर अपने हृदय में निजानंद का दीप प्रज्जवलित किया।

इस प्रकार भक्तिरस, ज्ञान और आध्यात्मिक उमंग से ओतप्रोत जागनी यात्रा के कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए।

अक्षरातीत धामधनी इस जागनी यात्रा को सफल बनाएं और सभी सुन्दरसाथ एकदिली एवं प्रेम भाव से इसमें अपना सहयोग दें, यही हमारी हार्दिक प्रार्थना और कामना है।

जागनी यात्रा के कुछ पल

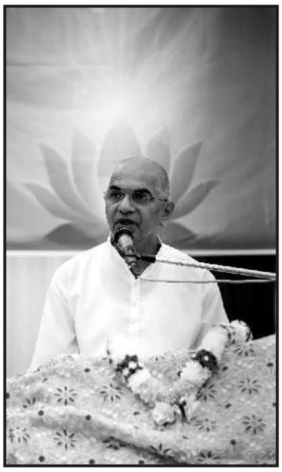

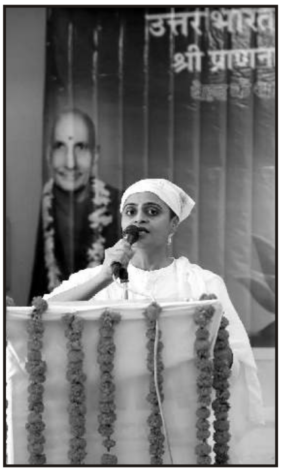

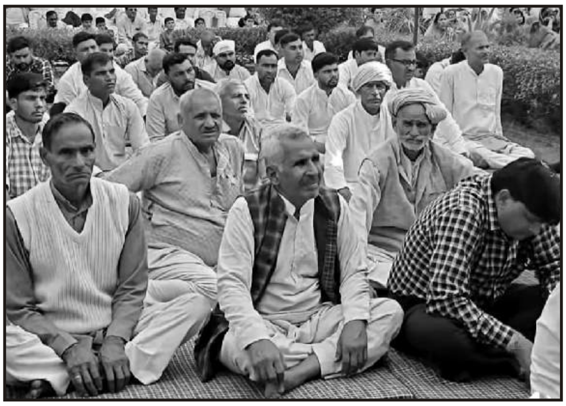

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की **C.B.S. A/C** संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

1. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट खाता संख्या – 3290805513	
2. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना खाता संख्या – 3759122888,	
सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया, पता : शाखा–सरसावा, सहारनपुर, उ.प्र. – 247232 MICR Code - 241016005 IFSC Code - CBIN0282531	**सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया,** पता : शाखा – पन्ना IFSC Code CBIN0282158

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निर्माण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन– 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ,
सरसावा से प्रकाशित साहित्य की सूची

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	न्योछावर
01	श्री कुलजम स्वरूप	550
02	श्री बीतक साहिब टीका	400
03	बीतक चर्चा	350
04	रास ग्रन्थ टीका	180
05	प्रकाश ग्रन्थ टीका	400
06	खटरुती ग्रन्थ टीका	100
07	कलश ग्रन्थ टीका	230
08	सनन्ध ग्रन्थ टीका	300
09	किरन्तन ग्रन्थ टीका	300
10	खुलासा ग्रन्थ टीका	250
11	खिलवत ग्रन्थ टीका	250
12	परिक्रमा ग्रन्थ टीका	330
13	सागर ग्रन्थ टीका	230
14	सिनगार ग्रन्थ टीका	400
15	सिन्धी ग्रन्थ टीका	100
16	मारफत सागर ग्रन्थ टीका	180
17	कयामतनामा ग्रन्थ टीका	160
18	किरन्तन (अंग्रेजी में) ग्रन्थ टीका	350
19	किरन्तन (नेपाली में) ग्रन्थ टीका	300
20	परमधाम पट्दर्शन	650
21	परमधाम पट्दर्शन (गत्तेवाली)	700
22	पुराण संहिता	200
23	विद्वद्दमनी	200
24	कलश टीका (नेपाली में)	150
25	भ्रान्ति नाशनम्	80
26	श्री मुखवाणी संगीत (छोटी)	70
27	खाद्य परिशीलन	250
28	निजधाम दर्शन	150
29	रूपान्तरण (युगलदास जी–बड़ी वृत्त)	100
30	आर्ष ज्योति	120
31	चितवनि रहस्य	80
32	तारतम पीयूषम्	70
33	तारतम के निर्झर	70
34	ध्यान की पुष्पांजलि	70
35	सत्यांजलि	80
36	मूल स्वरूप की ओर	80
37	चितवनी महिमा	80
38	हमारी रहनी	50
39	प्रेम का चाँद	80
40	दोपहर का सूरज	80
41	महजरनामा	80
42	नित्य पाठ (बड़ी)	30
43	मांसाहार (विनाश का पर्याय)	80
44	ब्रह्मवाणी चर्चा	65
45	हमारी शाश्वत सम्पदा	60
46	निजानन्द योग (बड़ी)	70
47	झूठ ही झूठ	60
48	कड़वे सच	50
49	ज्ञान मन्थन	50
50	विराट–नक्शा (कैलेण्डर रूप में)	50
51	संस्कार पद्धति	70
52	गागर में सागर	50
53	प्राणनाथ महिमा (नई)	40
54	बीतक से शिक्षा	40

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	न्योछावर
55	ब्रह्माण्ड रहस्य	60
56	स्वास्थ्य के प्रहरी	40
57	तमस् के पार (बड़ी)	40
58	शब्दातीत शब्दों में	50
59	सेवा पूजा	30
60	ज्ञान मंजूषा	30
61	यथार्थ दीपिका	30
62	भागवत यथार्थम्	30
63	निजानन्द चित्र कथा	30
64	तमस् के पार (छोटी)	20
65	निजानन्द योग (छोटी)	20
66	अन्धकार देखि पारि/नेपाली	70/110
67	संसार से परमधाम की ओर	20
68	सत्य को बाटो (नेपाली में)	15
69	बोध मंजरी (हिन्दी)	15
70	बोध मंजरी (उड़िया)	15
71	चितवनी मार्ग दर्शन	10
72	चितवनी	10
73	नित्य पाठ	10
74	तारतम्य सुधा (भाग–1)	60
75	तारतम्य सुधा (भाग–2)	60
76	शाश्वत सत्य की ओर	10
77	सुबोध बाल बीतक	150
78	प्रश्न माला	5
79	मीर जी शेख जी का बयान	20
80	सोवं कयामतनामा (तीसरा कयामतनामा)	90
81	बुलन्द मुकदमा	40
82	हयातुनबी	40
83	मुख्तारे–हिन्द	20
84	अफलातूनी इलम	20
85	शब–ए–मेयराज	15
86	Food For Thought	250
87	Mystic Universe	80
88	Descent of the Absolute Divine	80
89	Get Introduced to Nijanand School	120
90	Darkness to Brightness	60
91	Chess of Mystic Spiritual Knowledge	25
92	Pearls of Spiritual Wisdom	30
93	Nijanand Meditation निजानन्द योग अंग्रेजी (बड़ी)	60
94	परमधाम विलास	60
95	Supreme Truth God	30
96	वर्णाश्रम	70
97	जागनी सुधा (भाग–1)	80
98	जागनी सुधा (भाग–2)	80
99	जागनी सुधा (भाग–3)	90
100	गीतादर्शनम्	60
101	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–1)	70
102	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–2)	80
103	जातिवाद	30
104	Shri Nijanand Swami	100
105	Elixir of Enlightenment	30

प्रकाशन कार्यालय

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र)
मोबाइल नं: 7088120381

बुक पोस्ट

RNI: UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2025-27

सेवा में